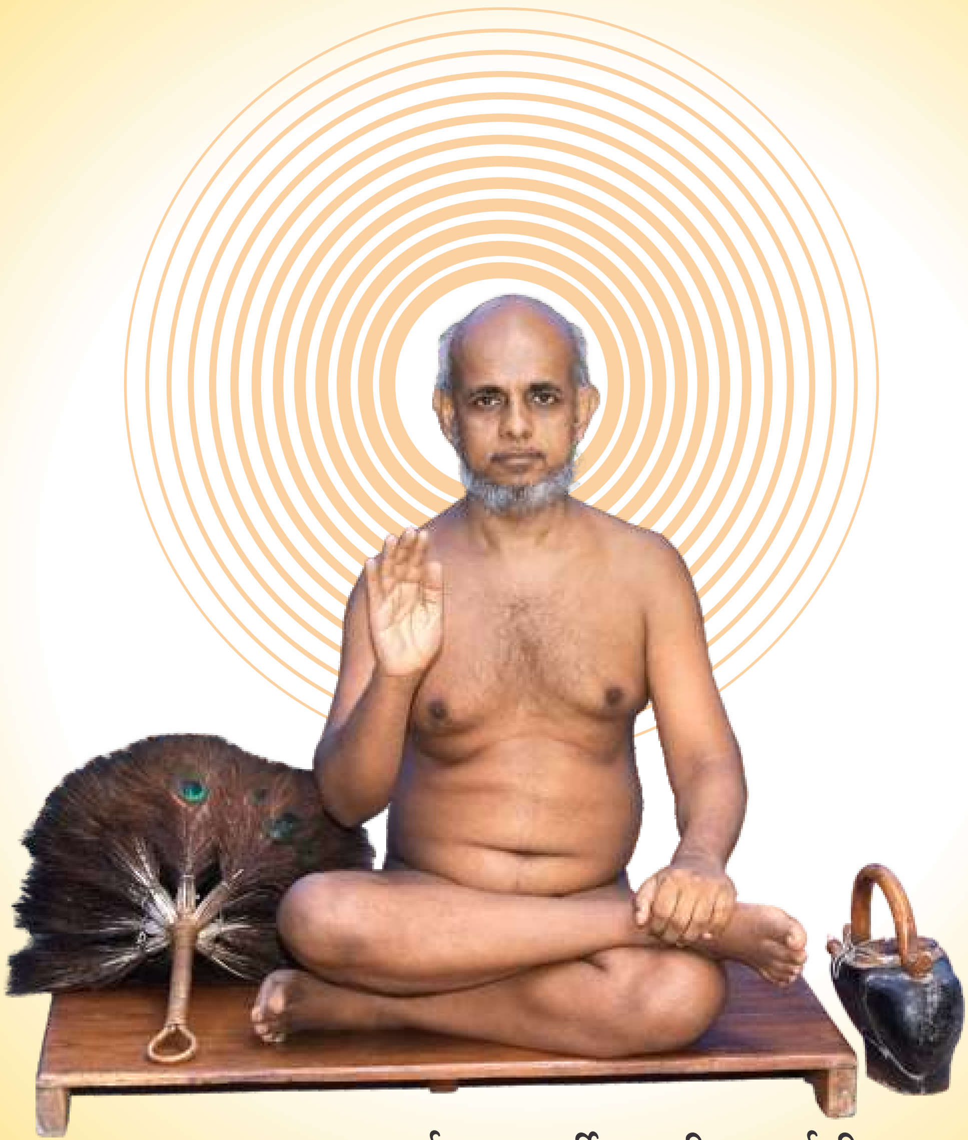

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

* जन्मदिवस 19–03–1971 * मुनिदीक्षा–11–05–1989 * आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणाः–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

श्री त्रिकाल चौबीसी विधान

रचनाकार

परम पूज्य आचार्यश्री गुप्तिनन्दी जी महाराज

प्रकाशक

श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन

धर्मतीर्थ-औरंगाबाद (महाराष्ट्र)

(परम्परानायक)

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

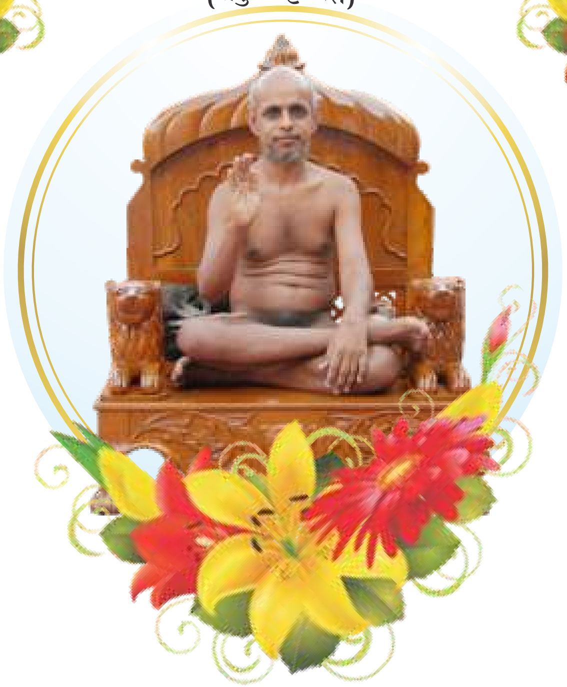

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्राय: होता है। फलत: उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

श्री त्रिकाल चौबीसी विधान

श्री लक्ष्मी प्राप्ति विधान

(रोट-तीज व्रत उद्यापन)

रचनाकार

प्रज्ञायोगी दिगम्बर जैनाचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव

सम्पादन

गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी

प्रकाशक

श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन

C/o धर्मराजश्री तपोभूमि दिगम्बर जैन ट्रस्ट, धर्मतीर्थ
पोस्ट-धर्मतीर्थ मार्ग, कचनेर अतिशय क्षेत्र के पास
तालुका, जिला औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
www.jainacharyaguptinandiji.org
E-mail : dharamrajshree@gmail.com

पुस्तक का नाम : श्री त्रिकाल चौबीसी विधान
श्री लक्ष्मी प्राप्ति विधान (रोट-तीज व्रत उद्यापन)

आशीर्वाद : गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव
: वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव

रचनाकार : प्रज्ञायोगी दिगम्बर जैनाचार्य श्री गुप्तिनंदी जी गुरुदेव

संपादन : गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी

आचार्य श्री से दीक्षित-शिक्षित साधु-साध्वी गण : मुनि श्री समाधिगुप्तजी, मुनि श्री सुयशगुप्तजी
मुनि श्री चन्द्रगुप्तजी, मुनि श्री विमलगुप्तजी
मुनि श्री विनयगुप्तजी, मुनि श्री महेन्द्रगुप्तजी
गणिनी आर्यिका क्षमाश्री माताजी
आगमस्वरा आर्यिका आस्थाश्री माताजी
आर्यिका निर्मोहश्री माताजी
क्षु. सुधर्मगुप्तजी, क्षु. धर्मगुप्तजी, क्षु. शान्तिगुप्तजी
क्षु. धन्यश्री, क्षु. तीर्थश्री

सर्वाधिकार सुरक्षित : रचनाकाराधीन

संस्करण : षष्ठम्, वर्ष-2020

प्रकाशक : श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन, धर्मतीर्थ क्षेत्र कचनेर के पास,
औरंगाबाद (महाराष्ट्र)
Email : dharamrajshree@gmail.com

प्राप्ति स्थान
1. प्रज्ञायोगी दिगम्बर जैनाचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव ससंघ
2. श्री धर्मतीर्थ, औरंगाबाद (महाराष्ट्र) 9421503332
3. श्री नितिन नखाते, नागपुर, 9422147288
4. श्री राजेश जैन (केबल वाले), नागपुर 9422816770
5. श्री रमणलाल साहू जी, औरंगाबाद मो. 9823182922
6. श्री सुबोध जैन, राधेपुरी, दिल्ली 9910582687

मुद्रक : राजू ग्राफिक आर्ट, जयपुर
Mob. : 9829050791 Email : rajugraphicart@gmail.com

कहाँ क्या है...

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ सं.
1.	आशीर्वाद (ग. आचार्य श्री कुंथुसागरजी गुरुदेव)	4
2.	शुभाआशीर्वाद एवं शुभकामनायें (आचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव)	5
3.	आद्य वक्तव्य (ग. आर्यिका क्षमाश्री माताजी)	6
4.	प्रस्तावना (आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव)	8
5.	श्री रोट-तीज व्रत कथा	11
6.	क्यों करें ये विधान	27
7.	विनय पाठ	28
8.	पूजा प्रारम्भ	29
9.	श्री नित्यमह पूजा (ग. आर्यिका राजश्री माताजी)	33
10.	श्री रोट-तीज व्रत उद्यापन विधान मांडला	37
11.	श्री त्रिकाल चौबीसी विधान	38
12.	श्री त्रिकाल चौबीसी आरती	55
13.	विधान प्रशस्ति	57
14.	आचार्यश्री गुप्तिनंदी गुरुदेव की पूजा	58
15.	अर्घावली	62
16.	समुच्चय अर्घ	64
17.	शांतिपाठ (हिन्दी), विसर्जन	65-66
18.	चौबीस तीर्थंकर चालीसा	67
19.	श्री सम्मेद शिखर चालीसा	69

आशीर्वाद

बड़ी प्रसन्नता की बात है कि अब आपके हाथों में 'रोट तीज व्रत विधान' छपकर आ रहा है। लेखक हैं हमारे शिष्य आचार्य गुप्तिनंदीजी। भारतीय संस्कृति में व्रत विधानों का बड़ा ही महत्त्व है, जो भी श्रद्धापूर्वक इन व्रतों को करता है उसके अनेक भवों के पाप नष्ट हो जाते हैं, महापुण्य का बंध होता है, भवांतरों के अंदर जीव कर्म काटकर मोक्ष जाता है। अनेक व्रतों के अंदर एक रोट तीज व्रत भी है। इस रोट तीज व्रत का विधान आचार्य गुप्तिनंदीजी महाराज ने बड़ा ही परिश्रम करके लिखा है। धार्मिक समाज विधान करके अवश्य लाभ उठावें, ऐसा मेरा आशीर्वाद है। लेखक आचार्य श्री गुप्तिनंदी महाराज को भी प्रति नमोऽस्तुपूर्वक आशीर्वाद।

ग.आ. कुन्थुसागर

श्री क्षेत्र कुंथुगिरी (महा.)

शुभाशीर्वाद एवं शुभकामनायें

सत् साहित्य समाज के लिए दर्पण के समान है। समाज साहित्यरूपी दर्पण से स्वयं दर्शन करता है, सजाता है, संभालता है, परिष्कृत करता है। इसलिए कहा है **''सर्वस्य लोचनं शास्त्र यस्य नास्ति अन्ध एवं सः''** अर्थात् शास्त्र सब के लोचन हैं और जो शास्त्र नहीं अध्ययन करते हैं वे चक्षुवाले होकर भी अन्धे हैं। ऐसे सत् साहित्य की रचना हमारे साधर्मी बन्धु आचार्य गुप्तिनन्दी भी करते हैं। प्रस्तुत नवीन कृति 'रोट तीज कथा' इस शृंखला की नई कड़ी है। आचार्य गुप्तिनंदी में कवित्व कला उत्तम होने से वे विशेषतः पद्यात्मक रचना करते हैं। यह पद्यात्मक विधा भारत की प्राचीन सुरूचिपूर्ण लालित्य कला है।

यह नवीन कृति स्वर्गीय ग. आर्यिका राजश्री को शुभाशीर्वाद सहित मेरी मंगलकामना यह है कि विश्व के प्रत्येक जीव सत्य-समता-साधनामय मार्ग से शाश्वतिक आत्मोत्थ अनन्त सुख को प्राप्त करें। इस कृति के प्रकाशक, सहायक, सदुपयोग करने वालों को मेरा शुभाशीर्वाद।

आचार्य कनकनन्दी

पाड़वा-साधुतीर्थ

28-7-2008

आद्य वक्तव्य

भारत धर्म प्रधान देश है। भारत की वसुन्धरा से ही ऋषि, मुनि, यति, तीर्थंकर, महापुरुष, अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय आदि का जन्म होता है। इन संतों की कृपा से त्याग, व्रत, उपवास की परम्परा चलती रहती है। इस देश में त्याग की तथा त्यागियों की पूजा होती है। जब तक यहाँ साधु-संतों की, त्यागी व्रतियों की पूजा होगी तब तक भरत क्षेत्र में सूर्य, चन्द्र व अग्नि दिखाई देंगे। इस कलिकाल में जो लोग त्याग, व्रत, उपवास कर रहे हैं, आगम के अनुसार चल रहे हैं वे ही इस प्रकृति के कुछ संतुलन को बनाये हुए हैं।

इस भौतिक युग में जितनी इंसान को भौतिक साधनों की चाह है उतना ही वह दुःखी है/त्रस्त है इसलिए वह हर संत को चातक पक्षी की तरह देखता है कि गुरु की थोड़ी कृपा मुझ पर भी हो जाये तो मुझे सुखामृत की कुछ बूँद मिल जाये जिससे वह दुःखों से मुक्ति पा जाये। ऐसे प्राणियों को सुखी बनाने के लिए हमारे परम उपकारी गुरुओं ने अनेकों उपकार किये हैं, जिन्हें हमें कभी न भूलकर उन संतों का आशीर्वाद पाने हेतु उनकी पूजा, अर्चा, सम्मान, विनय, सेवा आदि करना चाहिये। इसी उपकार की श्रृंखला में कड़ी से कड़ी जोड़ने वाले प्राचीन आचार्यों की परम्परा को अक्षुण्ण बनाते हुए 'परम पूज्य आर्षमार्ग संरक्षक, कविहृदय, प्रज्ञायोगी दिगम्बर जैनाचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव' ने "**श्री त्रिकाल चौबीसी विधान अपर नाम (रोट-तीज व्रत उद्यापन)**" नामक ग्रंथ की रचना की है। उनकी उदात्त भावना है कि इस व्रत का हर

भक्त पालन करके व्रत के महत्त्व को समझे, व्रत की निंदा न करें; क्योंकि इस व्रत की कथा से आचार्यश्री ने स्पष्ट बतला दिया है कि व्रत की अवमानना (अपमान) न हो। व्रत के अपमान से निर्धनता, अपमान तो मिलता ही है साथ में अपने भी पराये हो जाते हैं। दुःख में कोई साथ नहीं देता अपितु धन के मद में जिस परिवार ने धर्म की निंदा की, गुरु द्वारा दिये गये व्रत की हँसी उड़ाई। अंत में उन्हें हारकर व्रत की, उसी धर्म की शरण में उन्हें आना पड़ा। प्रायश्चित्तपूर्वक धर्म की शरण प्राप्त करते ही पुनः वे सभी सुखी हो गये। यह ग्रंथ भव्य जीवों के लिए परम उपकारी है।

आगमोक्त विधि से रचित इस ग्रंथ में आचार्यश्री ने 72 (बहत्तर) अर्घ व पाँच पूर्णार्घों से सुन्दर काव्यालंकारों के पुष्पों से गुन्थित कर महान् पुण्यार्जन किया है। नरेन्द्र छंद, दोहा, अडिल्ल छंद व शम्भु छंद से रचित यह ग्रंथ जितना पठनीय है उससे भी अधिक आचार्यश्री के मुखारविन्द से इस कथा को सुनने में भव्यों का मन द्रवित होता ही है तथा हृदय परिवर्तित भी होता है। अतः पाठकगण इस कथा को पढ़ें। अपने जीवन को अनंत सुखी बनायें, और गुरु मुख से इसका अमृत-पान कर अपने दुःख-दरिद्र को दूर भगायें।

-गणिनी आर्यिका क्षमाश्री माताजी

प्रस्तावना

विश्व का आध्यात्मिक गुरु भारत धर्म प्रधान देश है। यहाँ चारों पुरुषार्थों में धर्म पुरुषार्थ को प्रमुख स्थान दिया गया है; क्योंकि हमारी संस्कृति का निर्माण तीर्थंकर भगवंतों, गणधर महंतों, निर्ग्रन्थ आचार्य संतों ने किया है। हमारे आचार्य बड़े मनोवैज्ञानिक थे। वे समाज मनोविज्ञान को बहुत अच्छे ढंग से जानते थे। उन्हें यह बोध था कि मनुष्य उत्सव प्रिय है। सामान्य दिनों में उसकी धार्मिक भावनायें कमजोर हो जाती हैं, जबकि किसी पर्व/उत्सव विशेष में उसमें धार्मिक उत्साह का विशेष संचार होता है। इसी कारण मानव मन को अध्यात्म से जोड़ने हेतु हमारे जैनागम में अनेक पर्वों का उल्लेख मिलता है। पर्व मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं-(1) त्रैकालिक शाश्वत पर्व, (2) नैमित्तिक पर्व। अष्टाह्निका पर्व, सोलहकारण, दशलक्षण, रत्नत्रय आदि शाश्वत त्रैकालिक पर्व हैं। 24 तीर्थंकरों के पंचकल्याणक, महावीर जयंती, दीपावली, श्रुतपंचमी, गुरु-पूर्णिमा, वीरशासन जयंती, अक्षय तृतीया, रक्षाबंधन आदि नैमित्तिक पर्व हैं। इसमें से एक 'रोट-तीज पर्व' है। व्रत कथा कोष, आराधना कथा कोष, कथा संग्रह के अनुसार 'रोट-तीज पर्व' शाश्वत, त्रैकालिक अनादि निधन पर्व है।

मुनि दीक्षा लेने के बाद जब प्रत्येक रोट-तीज पर्व पर मैंने श्री गुरुमुख से इस व्रत की कथा को सुना तब बड़ा रोमांच होता था। सुनते-सुनते इस व्रत के प्रति मन में भावना जागृत हुई कि क्यों न इस अतिशयकारी व्रत पर विधान लिखा जाये। मन की भावना को संघस्थ वात्सल्यमूर्ति गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी ने और प्रेरणा दी कि गुरुवर आज जैन समाज में अनेक प्राणी इस व्रत को

करते हैं। इस व्रत की कथा तो मिलती है; लेकिन इसकी पूजा, उद्यापन विधान नहीं मिलता। अतः यदि आप इसका उद्यापन विधान लिख देवें तो व्रत करने वाले सभी भव्यात्माओं को सरलता हो जायेगी। माताजी की प्रेरणा मेरे लिये दीपस्तंभ बन गयी। उन्होंने इस विधान के लेखन में मेरा पूरा सहयोग दिया एवं सुन्दर ढंग से इसका संपादन भी किया। एतदर्थ उन्हें शुभाशीर्वाद है। यह प्रेरणा पुण्य उन्हें उत्तम सिद्धपद की प्राप्ति कराये।

प्रस्तुत व्रत की कथा से ज्ञात होता है कि व्रत की निंदा से व उसे ग्रहण करके अधूरा छोड़ने से जीवन में कैसे उतार-चढ़ाव आते हैं। धर्म का सहारा छोड़ने से कैसे सारा पुण्य शीघ्र क्षीण हो जाता है। पुण्य के अभाव में पुरुषार्थ के सारे पासे उल्टे पड़ते हैं। हर जगह असफलता प्राप्त होती है एवं अपने दुष्कर्म का पश्चाताप करने पर, उसका प्रायश्चित्त करने पर, श्रद्धापूर्वक व्रत को स्वीकार करके उसका शुभारंभ करते ही जीवन में शीघ्र उत्थान होने लगता है। यह व्रत हमें जिनधर्म की सम्यक् शरण ग्रहण करने की प्रेरणा देता है।

प्रत्येक धर्मात्मा, भव्यात्मा जीव इस व्रत कथा को पढ़कर व्रत ग्रहण करें एवं सरलता से उद्यापन कर सके। घर-घर में इस व्रत का, जिनधर्म का प्रचार-प्रसार हो सके एवं सभी जीव यह व्रत कर पुण्यार्जन कर सकें, इसी भावना को लेकर यह विधान बनाया है। प्रस्तुत विधान में 72 अर्घ एवं 5 पूर्णार्घ हैं। बड़े भक्तिभाव से अल्प समय में **"श्री त्रिकाल चौबीसी विधान"** यह विधान सम्पन्न हो सकता है। संघस्थ मूलनायक कल्पतरु श्री शांतिनाथ भगवान् के पादमूल में 26 जून, 2005 को यह विधान लिखकर पूर्ण किया गया। वर्तमान शासन नायक तीर्थंकर श्री वर्द्धमान स्वामी एवं श्री गौतम गणधर भगवान् के आशीर्वाद से मुझमें विधान लेखन के भाव जागृत हुए। पूज्य दीक्षा गुरु गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव एवं शिक्षागुरु आचार्यश्री

कनकनंदीजी गुरुदेव के आशीर्वाद से यह कार्य अल्प समय में सम्पन्न हुआ है।

इस ग्रंथ के लेखन, प्रूफ संशोधन में संघस्थ मुनिश्री सुयशगुप्तजी, मुनि श्री चन्द्रगुप्तजी, गणिनी आर्यिका क्षमाश्री माताजी, आर्यिका आस्थाश्री माताजी ने सहयोग देकर माता वागेश्वरी की सेवा की है, एतदर्थ सबको क्रमशः प्रतिनमोऽस्तु व समाधिस्तु आशीर्वाद है।

इस पुस्तक के अगले संस्करण का प्रकाशन जिन दातारी के अर्थ सौजन्य से हो रहा है। उन्हें शाश्वत सुख की प्राप्ति हो यही शुभाशीर्वाद है।

ग्रन्थ के मुद्रक 'राजू ग्राफिक आर्ट, जयपुर (श्री संदीप शाह) को आशीर्वाद। अंत में इस ग्रंथ के उपयोगकर्त्ता पुण्यभागी पाठकों, जिन आराधकों को भी हमारा आशीर्वाद है। वे इस ग्रंथ का अधिकाधिक उपयोग करें। जन-जन तक रोट-तीज व्रत की महिमा पहुँचाये व अटल/अचल/शाश्वत लक्ष्मी पायें।

ग्रन्थ में हुई भूलें सभी मेरी हैं तथा ग्रंथ की अच्छाइयाँ पूज्य दीक्षा प्रदाता ग. गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव, शिक्षागुरु आचार्यश्री कनकनंदीजी गुरुदेव की है। सुधी पाठक ! प्राचीन आचार्य प्रणीत आगम के आलोक में त्रुटियों से अवगत करायें जिससे अगले संस्करण में उसका संशोधन हो सके।

शेष शुभ,

वर्धताम् जिनशासनम् !

-आचार्य गुप्तिनंदी

श्री रोट-तीज व्रत कथा

एक समय भगवान महावीर स्वामी का समोशरण विपुलाचल पर्वत पर आया। उनके आगमन से उस पर्वत की चारों दिशाओं में सौ-सौ योजन तक सुभिक्ष हो गया। प्रभु के आगमन से प्रकृति का कण-कण प्रफुल्लित हो गया। चारों तरफ हरियाली छा गयी। हर वृक्ष, पौधों की डाली-डाली पत्ते, फूल-फलों से भर गये। छह ऋतुओं के फल-फूल युगपत एक साथ खिल गये। मानों धरती, गगन और प्रकृति प्रभु के आगमन का स्वागत ही कर रही हो। प्रकृति के इस अप्रत्याशित परिवर्तन को देख वनमाली भी आश्चर्यचकित हो गया। उसने छह ऋतुओं के फल-फूलों को एक सुन्दर थाल में सजाया और ले जाकर राजगृही नगर के राजा महामंडलेश्वर महाराज श्रेणिक के समक्ष समर्पित किया एवं विनयपूर्वक समोशरण सहित भगवान महावीर स्वामी के आगमन का शुभ समाचार दिया।

भगवान महावीर के आगमन के समाचार को सुनकर राजा श्रेणिक अत्यन्त हर्षित हुए। अपने सिंहासन से समोशरण की दिशा में सात कदम आगे चलकर उन्होंने प्रभु को साष्टांग नमस्कार किया। उन्होंने पूरे शहर में भगवान महावीर स्वामी के आगमन की सूचना करवा दी। साथ ही नगरवासियों से प्रभु दर्शन हेतु चलने का आह्वान भी कराया। वे स्वयं एक हाथी पर बैठकर रानी चेलना के साथ प्रभु दर्शन को निकल पड़े। राजा प्रजा सहित सभी नगरवासियों की भव्य शोभा यात्रा प्रभु दर्शन को चल पड़ी। समोशरण के निकट जाकर राजा-रानी हाथी से नीचे उतरकर पैदल चल पड़े। उन्होंने समोशरण की तीन प्रदक्षिणा कर विधिपूर्वक भगवान महावीर स्वामी के दर्शन किये, उत्साहपूर्वक भगवान को अर्घ चढ़ाकर आरती की व प्रणाम करके मनुष्यों के कोठे में जाकर बैठ गये।

तत्पश्चात् राजा श्रेणिक ने अत्यन्त विनयपूर्वक श्री गौतम स्वामी से पूछा ''हे भगवन् ! यह रोट–तीज व्रत क्या होता है ? इसे किस प्रकार व क्यों किया जाता है एवं इसका क्या फल होता है ? हे भगवन् ! मुझे इसकी कथा एवं विधि बताकर मेरा कल्याण करें।

तब गौतम स्वामी बोले ''हे श्रेणिक ! तुमने बहुत उत्तम प्रश्न किया है। यह श्री त्रिकाल चौबीसी विधान अपर नाम रोट–तीज व्रत अंतराय कर्म का निवारण करने वाला, दरिद्रता, गरीबी, निर्धनता को दूर करने वाला अतिशयकारी अनादिनिधन व्रत है। इस व्रत की कथा एवं विधि ध्यानपूर्वक चित्त एकाग्र करके सुनो।''

मालवा देश की राजधानी उज्जैन नगर में एक सागरदत्त नाम का सेठ रहता था। वह छप्पन करोड़ स्वर्ण मुद्राओं का स्वामी था, इस कारण उसके महल की छत पर हमेशा छप्पन ध्वजायें फहराती रहती थी। भारत सहित सम्पूर्ण देश–विदेश में उसका व्यापार चला करता था। विदेशों में वह स्वयं के सैकड़ों जहाजों से व्यापार करता था। हीरे, मोती, जवाहरात उसके घर में यत्र–तत्र–सर्वत्र बिखरे रहते थे। अनेकों नौकर–चाकर उसके आदेश पालन हेतु दिन–रात हमेशा उपस्थित रहते थे। उसकी प्रिय पत्नी का नाम सागरदत्ता था। उन दोनों के सात श्रेष्ठ पुत्र तथा सात पुत्रवधु थी। जो सर्वांग सुन्दरी, पुण्यात्मा, सौभाग्य शालिनी थी।

एक समय सागरदत्ता सेठानी नगर के बाहर उद्यान में श्री निर्ग्रन्थ दिगम्बर मुनिराज के दर्शन हेतु गयी। वहाँ उनसे धर्मसभा में अन्य श्रावकों के साथ मुनिराज के हितकारी प्रवचन सुने। मुनिराज के हृदय-स्पर्शी प्रवचनों को सुनकर, उपस्थित सभी भक्तों के त्यागमय परिणाम हुए। सभी श्रोताओं ने अपनी शक्ति अनुसार मुनिराज से नियम ग्रहण किये। सबको नियम लेता देख सागरदत्ता सेठानी के भी नियम लेने के भाव हुए। सभी भक्तों के जाने के बाद वह मुनिराज के पास गयी एवं मुनिराज से निवेदन किया ''हे मुनिवर ! मुझे भी शक्ति अनुसार एक छोटा-सा व्रत प्रदान करें। मुझे ऐसा व्रत दें जो वर्ष में एक ही बार आता हो तथा उसमें भी रूखा-सूखा ही कुछ खाने को मिल जाता हो।''

उसकी भावना देख मुनिश्री मुस्कुराये और कहा ''जैनधर्म बहुत उदार, विशाल व लचीला है इसमें शक्ति अनुसार ही धर्मसाधना करने का मार्ग बताया है। तुम्हारी जितनी शक्ति हो उतना ही व्रत करो।'' तुम 'रोट-तीज व्रत' को ग्रहण करो। यह व्रत वर्ष में एक ही बार भाद्रपद शुक्ला तृतीया को आता है। इसमें भगवान के समक्ष रोट व खीर अर्पण कर स्वयं भी रोट व बिना नमक की तोरई की सब्जी या रोट व खीर ग्रहण की जाती है। इस प्रकार मुनिवर ने उस व्रत की पूरी विधि सेठानी को समझायी, साथ ही कहा यह छोटा-सा व्रत भी महान् अतिशयकारी है। यह मुख्य रूप से अन्तरायकर्म व सर्व आपदा-विपदा, संकट का निवारण करने वाला है। मुनिश्रेष्ठ के वचन सुन सेठानी ने उस व्रत को ग्रहण किया।

घर आकर सेठानी ने व्रत ग्रहण की समग्र वार्ता अपने बेटे-बहुओं सहित सभी परिवार जनों को बताई। व्रत को सुन सबने उसकी निन्दा की, सातों बेटे-बहुओं ने कहा कि ''जो चावल 24 घंटे तालाब में कमल के पुष्पों के बीच रखे जाते हैं वो तो हमें पचते नहीं है, फिर रूखा-सूखा कठोर रोट

कैसे खाया जायेगा ?'' ये व्रत तो वे ही लोग करते हैं जो कंगाल हैं, जिनके घरों में कुछ खाने–पीने को नहीं होता। इत्यादि अनेक प्रकार से व्रत की निंदा को सुन सेठानी ने वह व्रत छोड़ दिया।

व्रत को छोड़ने एवं व्रत निंदा के पापोदय से उन्हें अब व्यापार में हानि होने लगी। विदेशों में गये जहाज वहीं लुप्त हो गये, उन सबसे सम्पर्क टूट गया। घर में रखी छप्पन करोड़ स्वर्ण मुद्रायें मिट्टी हो गयी, हीरे कोयले में बदल गये, रत्न पत्थर बन गये और सभी मोती पानी बन गये। समस्त व्यापार चौपट हो गया। धनाभाव में नौकर–चाकर समस्त बंधु–बांधव भी छोड़कर भाग गये। सम्पूर्ण अनाज, धान्य भंडार भी दूषित हो गया। मकान जीर्ण–शीर्ण जर्जर हो गया और दुकानों में ताले लग गये। अंत में सबके भूखों मरने की नौबत आ गई। घर में पूर्णतया दरिद्रता, बेबसी का साम्राज्य छा गया। इसलिये हमें कभी भी अपनी धन–सम्पदा, वैभव का घमंड नहीं करना चाहिये। धन के मद में किसी भी व्रत की निंदा, धर्म व धर्मात्मा का अपमान–तिरस्कार नहीं करना चाहिये।

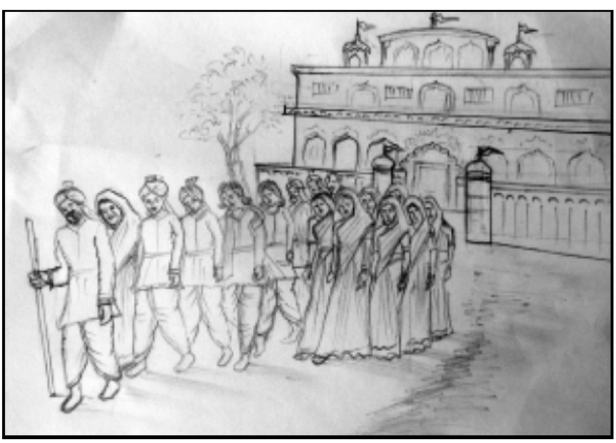

सब तरफ से हारकर वह सागरदत्त सेठ और सेठानी अपने सातों पुत्रों व पुत्रवधुओं के साथ उज्जैन शहर को छोड़कर भ्रमण करते–करते

सर्वप्रथम हस्तिनापुर शहर में पहुँचे। वहाँ उनकी मातृ-पितृ भक्ता लाड़ली बेटी ब्याही गयी थी। इसलिये वे वहीं नगर के बाहर उद्यान में ठहर गये एवं एक पत्र में सारी आपबीती लिखकर अपनी बेटी को सूचना करवायी कि हम इस मुसीबत के दिनों में कुछ समय तुम्हारे यहाँ रहना चाहते हैं; लेकिन बेटी ने पत्र लिख भेजा कि इस समय आप यहाँ ना रहकर कहीं और रहें; क्योंकि जब आप यहाँ रहेंगे तब ससुराल के लोग मुझ पर आरोप लगायेंगे कि यह ससुराल का धन चुराकर अपने मायके वालों को देती है तब यह आरोप मुझसे सहा नहीं जायेगा। इसलिये किसी को जानकारी होने से पूर्व ही आप यह नगर छोड़ दें तो इसमें आपका और मेरा सबका भला होगा। इस प्रकार बिना मिले ही सागरदत्त की बेटी ने एक दासी से वह पत्र, साथ में सोलह प्राणियों के लिये भोजन एवं उसमें ही पाँच बहुमूल्य रत्नों को छिपाकर भेज दिया। दासी भोजन और पत्र देकर चुपचाप लौट गयी; लेकिन जब उन्होंने पत्र के साथ थाली को खोलकर देखा तो उनके पापोदय से वे सभी बहुमूल्य रत्न कोयले के रूप में परिवर्तित हो गये एवं सम्पूर्ण भोजन कृमिकुल से दूषित हो गया। पत्र, कोयला और दूषित भोजन को उन्होंने वहीं गाढ़ दिया और उस पर एक चिह्न बनाकर वे वहाँ से भूखे-प्यासे निकलकर घूमते-घूमते हस्तिनापुर से बसंतपुर पहुँच गये।

बसंतपुर में सागरदत्त सेठ का ससुराल था। वहाँ उनका साला सेठ रामदत्त रहता था। रामदत्त सेठ अपनी बहन सागरदत्ता को बहुत अधिक चाहता था, साथ ही भाभी रामदत्ता भी अपनी ननद को बड़ी बहन का सम्मान देती थी। उसी अटूट प्रेम को स्मृति में रख सागरदत्ता सेठानी अपने परिवार के साथ अपने भाई के यहाँ पहुँची; लेकिन वहाँ घर में कोई बड़ा उत्सव हो रहा था, विशाल प्रीतिभोज का आयोजन था। नगर के सभी सम्पन्न लोग सुन्दर-सुन्दर नवीन वस्त्राभूषण पहनकर उनके यहाँ आ रहे थे।

साले के घर का उत्सव और स्वयं के फटे–मैले वस्त्र, दयनीय अवस्था को देख सेठ ने विचार किया कि यदि इस दुर्वस्था में हम अचानक घर में चले गये तो रंग में भंग पड़ जायेगा। हमारे साथ हमारे साले की भी बदनामी होगी। अतः उत्सव समाप्ति की प्रतीक्षा करते हुए वे उसी घर के पीछे उद्यान में ठहर गये। वहाँ मकान के पीछे नाली में से चावल का गर्म–गर्म मांड बह रहा था। सागरदत्त का परिवार बहुत दिनों से भूखा–प्यासा था। गर्म मांड को देख उनकी भूख और अधिक जागृत हो गयी। भूख की वेदना असहनीय होने पर सेठानी ने वहीं पड़ा हुआ एक मिट्टी का घड़ा उठा लिया व उसे नाली के पास लगा दिया, सोचा कि भैया के यहाँ तो शाम तक उत्सव चलेगा और हम सभी बहुत दिनों से भूखे हैं। यहाँ कोई देख भी नहीं रहा है इसलिये इस मांड से ही अपनी व सबकी क्षुधा शांत कर लें। ठीक ही है–

आचार्य कहते हैं **'भूख न देखे झूठी पात', 'बुभुक्षितं किं न करोति पापम्' भूखा क्या–क्या पाप नहीं करता।** वह घड़ा भरने तक वहीं खड़ी हो गयी; लेकिन छत से उसकी भाभी ने उसे देख लिया। अपनी ननद व उसके परिवार के मैले–कुचैले, फटे वस्त्र व दयनीय अवस्था देख वह अचम्भित हो गयी; परन्तु सेठानी के पापोदयवश भाभी ने सोचा–यह पूरी तरह बर्बाद होकर लुट–

पिटकर आये हैं। अब यहाँ आकर हमें परेशान करेंगे। उनको भगाने की नियत से भौजाई (रामदत्ता) ने नाली से एक पत्थर सरका दिया। मांड के साथ वह पत्थर घड़े पर गिरा, घड़ा फूटा और पूरा मांड बिखर गया जिससे सेठानी के दोनों पैर बुरी तरह जल गये। सातों बेटे मामी की यह करतूत समझ गये और माँ को चादर में डालकर वहाँ से उठा ले गये।

वहाँ से वे सभी भटकते–भटकते अयोध्या नगर पहुँच गये। अयोध्या में सेठ सागरदत्त के मित्र सेठ सागरसेन रहते थे। सेठ ने अपनी पत्नी और पुत्रों से कहा ''आज बुरे समय में हमारे अपने ही पराये हो गये हैं।'' कहते हैं–

रिश्तेदार बन जाते हैं सभी, जब पैसा पास होता है।
वह भी मुँह फेर लेता है गरीबी में, जो रिश्ता खास होता है।।

हमारी ही सगी बेटी और सगे साले ने जब ये व्यवहार किया है। जब रिश्तेदार ही अपना साथ निभाने को तैयार नहीं तब मित्र से क्या उम्मीद की जा सकती है ? फिर भी दो जगह धक्के खाये एक और सही! आज मित्र को भी आजमा लेते हैं। आप सभी यहीं नगर के बाहर रूकें, मैं अपने मित्र के पास जाऊँगा यदि उसने मित्रता निभायी, सहयोग देने को तैयार हुआ तो मैं आप लोगों को भी बुलाऊँगा।'' ऐसा कह वह सेठ अपने मित्र के यहाँ गया। मित्र ने अपने मित्र का बड़े उत्साह से स्वागत किया। दुःख की घड़ी मे साथ देने का वादा किया और मित्र को अपने घर से नहीं जाने दिया।

''सच्चा मित्र वही जगती में, सर्वश्रेष्ठ कहलाता है।
मैत्री के प्रण को जो 'अथ' से 'इति' तक पूर्ण निभाता है।।''

दोपहर से शाम तक मित्र ने अपने मित्र की अच्छी तरह आवभगत की, परस्पर सुख–दुःख का वार्तालाप चलता रहा। रात्रि होने पर सेठ

सागरसेन अपने मित्र सेठ सागरदत्त की सोने की व्यवस्था उसी कमरे में करके स्वयं दूसरे कमरे में सोने चले गये एवं नौकरों को मित्र की सेवा में लगा गये।

सेठ सागरदत्त जिस पलंग पर लेटे थे उसी के ठीक सामने एक स्वर्णमयी मयूर की मूर्ति लगी थी। उस मोर की चोंच में बहुमूल्य रत्नों का हार लटक रहा था। सेठजी लेटे-लेटे भविष्य की योजना बना रहे थे। अचानक उनकी दृष्टि उस मयूर पर पड़ी तो देखते हैं वह स्वर्णमयी अचेतन मोर अपने मुँह (चोंच) में लटके हुए बहुमूल्य हार को निगल रहा है। इस दृश्य को देख सेठ किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये। भविष्य का दृश्य उसके सामने आ गया कि प्रातःकाल होते ही इस हार की चोरी का आरोप मेरे ऊपर आयेगा। मेरा मित्र मेरे विषय में क्या सोचेगा? जिसने मुझ पर विश्वास करके मुझे सहारा दिया उसे मैं क्या जवाब दूँगा? कैसे उसका विश्वास पुनः प्राप्त कर पाऊँगा? मित्र और उसके नौकर मेरे विषय में क्या सोचेंगे? अभी मेरे तीव्र पापकर्म का उदय है। ऐसा लांछन सहने के पहले ही मुझे यहाँ से चले जाना चाहिए। यह सोच रात्रि में ही किसी से बिना कुछ कहे चुपचाप वह सेठ वहाँ से निकलकर अपने परिवार के पास पहुँच गया। रात्रि में ही वे सब अयोध्या शहर को छोड़कर आगे चल पड़े।

वहाँ से घूमते–घूमते दर–दर की ठोकरें खाते वे सभी चंपापुर में पहुँच गये। वहाँ अनेक जगह प्रयास करने के बाद सेठ समुद्रदत्त के यहाँ वे सभी सोलह प्राणी नौकरी करने लगे। सागरदत्त अपने सातों पुत्रों के साथ दुकान पर लग गये। सेठानी सागरदत्ता भी अपनी सात बहुओं के साथ उसी घर में समस्त कार्यों में लग गयी। जानवरों का गोबर लेना, कंडे बनाना, झाड़ू–पौंछा, बर्तन–कपड़े, भोजन–पानी, चौका–चूल्हा आदि सभी कामों में उन्हें दिन–रात लगना पड़ता था। जिसके बदले में प्रतिदिन प्रत्येक नौकर–नौकरानी को 10 ग्राम कड़वा तेल और कुछ खली के टुकड़े मिलते थे। सेठ के विशाल बंगले के पास ही टूटी–फूटी झोपड़ी बनाकर वे अपने दुःख भरे दिन काट रहे थे। जिनके घरों में सैंकड़ों दास–दासी हर आदेश पालने को तत्पर रहते थे, आज वे स्वयं दूसरों की दासता कर रहे थे। फिर भी संकट की घड़ी में जिसने उन्हें अपने घर में शरण दी, काम देकर सहारा दिया, दो समय के भोजन की व्यवस्था दी, उसके यहाँ इन्होंने पूर्ण जिम्मेदारी से हर कार्य को संभाला। सेठ–सेठानी के हर आदेश को अपने माता–पिता का आदेश समझ, अपने ही घर का कार्य समझकर वे पूरी वफादारी से परिश्रम करने लगे। उनके लगन–परिश्रम, ईमानदारी को परख, उस घर की सेठानी समुद्रदत्ता ने सेठ सागरदत्त को अपना भाई बना लिया। इस तरह परिश्रम सहित कुछ शांतिपूर्वक उनका समय बीतने लगा।

एक दिन सेठानी ने सागरदत्ता से कहा ''भाभी आज घर की विशेष सफाई करना, पूरे घर की रंगाई–पुताई करना। तुम्हारी बहुओं के साथ घर का कोना–कोना साफ करो।'' सागरदत्ता ने पूछा ''कल ऐसा कौन–सा दिन है जिसकी आज विशेष तैयारी की जा रही है?'' सेठानी ने कहा ''कल रोट तीज व्रत है।'' यह हमारे समस्त विघ्न, आपदा–विपदा, अंतरायकर्म

का निवारण करने वाला दिव्य व्रत है। इसे 'त्रिलोक तीज' या 'त्रिकाल चौबीसी' व्रत भी कहते हैं।

इसकी विधि इस प्रकार है–भाद्रपद शुक्ला तीज से एक दिन पूर्व भोजनादि से निर्वृत्त होकर जिन मंदिर जाना चाहिये। जिन मंदिर में निर्ग्रन्थ दिगम्बर गुरु की साक्षी में व्रत ग्रहण करना चाहिये। यदि शक्ति हो तो रोटतीज व्रत में उपवास ग्रहण करना चाहिये। यदि शक्ति नहीं हो तो एकाशन का संकल्प करें। अगले दिन प्रातः जल्दी उठकर सामायिक–प्रतिक्रमण करें। स्नानपूर्वक मुखशुद्धि करके धोती–दुपट्टा आदि पूजा के योग्य स्वच्छ वस्त्र पहनकर, अपने घर में पूजन की शुद्ध सामग्री तैयार करें। पूजा सामग्री में रोट विशेष तैयार करें। परिवार के हर सदस्य के नाम से अलग–अलग रोट बनाना चाहिये। ध्यान रहे वह रोट कहीं से टूटा–फूटा दरार युक्त नहीं होना चाहिये। रोट अखण्ड व सुन्दर होना चाहिए। उसमें चारों ओर से कंगूरे निकले हों। उस रोट में शक्ति अनुसार रुपया लगाकर उस पर घी–बूरा या घी–गुड़ रखना चाहिये। दूसरे पात्र में अलग से सुन्दर खीर लेकर जिन मंदिर जायें। जिन मंदिर में भगवान का भव्य पंचामृताभिषेक व महाशांतिधारा करें। तत्पश्चात् त्रिकाल चौबीसी की पूजा करके वह रोट व खीर पूजा के साथ जिनेन्द्र प्रतिमा के समक्ष अर्पण करना चाहिये पूजा के बाद रोट तीज व्रत का मंत्र जाप अवश्य करना चाहिये। मंत्र इस प्रकार है–

(1) ॐ ह्रीं अर्हं श्री भूत वर्तमान भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमो नमः।

या

(2) ॐ ह्रीं अर्हं श्री वृषभादि वर्द्धमानपर्यंत चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

इस मंत्र की कम से कम एक माला जाप करें। शक्ति व समयानुसार अधिक माला भी जाप कर सकते हैं।

जिनपूजा के पश्चात् यदि नगर में दिगम्बर मुनिराज व चतुर्विध संघ विराजमान हो तो नवधा भक्तिपूर्वक उन्हें आहार देना चाहिये। आहारदान के बाद घर के बाल-वृद्धजनों व नौकर-चाकर आदि सबको भोजन कराकर स्वयं मौनपूर्वक एकाशन करें। एकाशन में भी रोट (बिना नमक का) व तोरई की साग या रोट व खीर को छोड़कर अन्य सबका त्याग करें। तीनों समय सामायिक करें। मध्याह्न काल में व्रत की कथा पढ़ें, अन्य समय में प्रथमानुयोगादि ग्रन्थों का स्वाध्याय करें। संध्याकाल में देव-शास्त्र-गुरु की आरती करें। रात में भजन-पूजन-कीर्तन आदि करें। शक्ति अनुसार रात्रि जागरण या कुछ देर विश्राम करें। इस तरह षट् आवश्यक कर्त्तव्यों का पालन करना चाहिए।

इस प्रकार यह व्रत वर्ष में एक ही दिन आता है। यह व्रत 3 वर्ष, 12 वर्ष या 24 वर्ष तक करना चाहिये। व्रत पूरा होने पर उद्यापन करना चाहिये। उद्यापन में विधानपूर्वक जिनालय में तीन छत्र, सिंहासन आदि 3-3 उपकरण, 3 शास्त्र, त्रिविध सत्पात्रों को आहारदानादि चारों दान करें। 3 छात्रों को पढ़ावें, विद्यालय, औषधालय आदि में करूणा दान करें। उद्यापन की शक्ति न हो तो व्रत दूना करें। इस व्रत से लक्ष्मी अटल-अचल रहती है।

व्रत की महिमा और विधि सुनकर सेठानी और सातों बहुओं को अपने पुराने दिन याद आ गये। धन के मद में व्रत निंदा का पाप भी उनकी स्मृति पटल पर आ गया। उन्हें अपने दुष्कृत्य पर खेद/पश्चात्ताप होने लगा। परिवार के सभी सदस्यों ने व्रत निंदा का हृदय से पश्चात्ताप किया एवं रोट तीज व्रतोत्सव को मनाने हेतु तत्परता से गृहकार्यों में लग गये।

अगले दिन सागरदत्ता की छोटी बहू अपने हिस्से का रोट लेकर चुपचाप जिन मंदिर गयी। वहाँ जिनेन्द्र प्रभु के समक्ष रोट चढ़ाकर वह कहने लगी–हे प्रभु ! हमें तो आपके समक्ष सोने का रोट चढ़ाना चाहिये; लेकिन जब हममें सामर्थ्य थी तब हमने कभी आपकी आराधना नहीं की। अब आपकी महिमा जानकर मैं आपके द्वार पर आई हूँ। मैं अपने परिवार के सभी सदस्यों की ओर से आपसे करबद्ध क्षमा माँगती हूँ। हे भगवन् ! हमारे अपराध क्षमा करना–

''पुण्य की याद आयी है बीत जाने के बाद,
तुमसे लगन लगायी है आजमाने के बाद।
हम तो भूल गये स्वयं अपने आप में,
रोट तीज व्रत की याद आयी है ठोकर खाने के बाद।।''

आपके चरणों से लगन लगी रहे इतनी कृपा बनाये रखना। इत्यादि अनेक प्रकार से करुण प्रार्थना करते हुए वह घर को चली गयी। उसकी भक्ति के प्रभाव से वह रोट स्वर्ण के रोट में बदल गया जिसकी पूरे नगर में चर्चा होने लगी कि आज किसने स्वर्ण का रोट चढ़ाया है।

मध्याह्न में समुद्रदत्ता सेठानी ने सागरदत्ता से कहा–तुम भी तुम्हारे भाग का रोट ले लो। यह सुन सागरदत्ता ने मन ही मन यह संकल्प किया कि ''मैं यह रोट जिनेन्द्र प्रभु को चढ़ाऊँगी'' इस भावना से रोट हाथ में ग्रहण

करते ही वह सोने का रोट बन गया। सोने का रोट देख समुद्रदत्ता के मन में लालच आ गया। उसने कहा ''भौजाई वहाँ सोने और आटे के दोनों रोट साथ में रखे थे, मैं गल्ती से यह रोट ले आयी हूँ'' यह कहकर उसने ज्यों ही सोने का रोट वापिस लिया त्यों ही वह रोट आटे का बन गया। समुद्रदत्ता ने 2–3 बार जब–जब सागरदत्ता के हाथ में रोट दिया तो वह सोने का बन गया तथा अपने हाथ में लेते ही वह आटे का बन गया।

यह देख समुद्रदत्ता ने कहा ''भौजाई अब तुम्हारे पुण्य का उदय आ गया है, इसलिये तुम्हारे हाथ में आते ही यह रोट सोने का बन जाता है। मैंने लालचवश इसे वापिस लिया तो यह मूलरूप में परिवर्तित हो गया अतः अब तुम ही इसे ग्रहण करो।'' सायंकाल समुद्रदत्त सेठ के आने पर उसने रोट परिवर्तन की सारी घटना अपने पति को बतायी व कहा ''अब इन्हें अपने यहाँ नौकरी करने की आवश्यकता नहीं है। आप इन्हें सहयोग रूप में कुछ धन प्रदान करें एवं स्वतंत्र व्यापार करने की सलाह दें।'' अगले दिन समुद्रदत्त सेठ ने सागरदत्त सेठ को कुछ अर्थ सहयोग देकर स्वतंत्र व्यापार करने की प्रेरणा दी। सेठजी की प्रेरणा से सागरदत्त ने अपने सातों पुत्रों के साथ पृथक व्यापार करना प्रारंभ किया। व्यापार चल पड़ा, थोड़े ही दिनों में अच्छा लाभ हुआ। कुछ दिनों बाद उन्हें उन सभी जहाजों की पुनः प्राप्ति के समाचार प्राप्त हुए तब वे अपनी धर्म बहिन और बहनोई से आज्ञा लेकर पुनः अपने गृह नगर उज्जैन की ओर चल पड़े।

लौटते समय क्रमशः सर्वप्रथम अयोध्या नगर आया। सागरदत्त अपने पूरे परिवार सहित अपने मित्र सागरसेन सेठ के घर गये। सागरदत्त को देख मित्र के सभी नौकर सावधान हो गये कि पिछली बार तो यह बहुमूल्य हार चुराकर चुपचाप भाग गये थे। अब हम इनकी पूरी चौकसी कर रंगे हाथ पकड़ेंगे; किन्तु मित्र ने उसी उत्साह से अपने मित्र का स्वागत किया

और कहा ''मित्र तुम बिना सूचना दिये कहाँ चले गये थे? मैं तुम्हें तुम्हारे उसी मुकाम तक पहुँचाने के लिये सहयोग देना चाहता था। इत्यादि उनका वार्तालाप चल रहा था कि उसी समय वहाँ खड़ा स्वर्णमयी मयूर का पुतला अपनी चोंच से शनैः-शनैः हार उगलने लगा। सागरदत्त ने उसको हार उगलते देख सबको दिखाया और अपने मित्र व उसके नौकरों को बताया कि ''देखो, उस समय मेरे तीव्र पापकर्म का उदय चल रहा था इस कारण मेरे पापोदय से मेरे देखते-देखते यह मोर हार को निगल गया और चोरी का आरोप मुझ पर लगा। उस समय मेरे पास मेरी ईमानदारी का कोई प्रमाण नहीं था। किसी भी सबूत के बिना मैं आपका विश्वास जीत नहीं पाता इसलिये बिना कहे चला गया। आज मेरे पुण्योदय से यह मोर पुनः उसी हार को उगल रहा है और कह रहा है मैंने चोरी नहीं की थी।'' इस घटना को देख उसका परिवार, मित्र व नौकर आदि सभी आश्चर्यचकित हुए व 'रोट तीज व्रत' के साथ 'जिनधर्म की' जय-जयकार करने लगे।

सागरदत्त अपने मित्र से विदाई लेकर आगे चल पड़े। मार्ग में बसंतपुर गाँव आया। सूचना मिलते ही सेठानी सागरदत्ता का भाई और भौजाई बैंड-बाजों के साथ बड़े प्रेम से अपनी प्यारी बहन-बहनोई व भांजों का स्वागत करने आये, प्रेम से घर ले गये। उत्तम प्रकार से उनकी आवभगत की। शाम को परस्पर सुख-दुःख का वार्तालाप करने लगे। तब सेठानी ने कहा ''उस समय जब हमें आपकी आवश्यकता थी तब तो भौजाई ने पत्थर सरका कर हमारे पैर जला दिये। आज भी उसका निशान नहीं मिटा है और आज आप लोग बड़ा प्रेम जता रहे हो।'' भौजाई ने क्षमा माँगते हुए कहा ''दीदी, उस समय आपके पापोदयवश मुझे वह कुबुद्धि सूझी थी, मुझे क्षमा करना।'' भाई-भाभी को क्षमादान दे, वे वहाँ से आगे बढ़े।

वहाँ से लौटते हुए वे हस्तिनापुर में आये। नगर के बाहर उद्यान में ठहर गये। आगमन का समाचार मिलने पर उनकी बेटी अपने ससुराल परिवार जनों के साथ बैंड–बाजा लेकर अपने माता–पिता की अगवानी करने आई। उसने माता–पिता व भाइयों से घर चलने का आग्रह किया। माता–पिता ने कहा ''बेटी जब हमें तुम्हारे सहयोग की आवश्यकता थी तब तो तुमने घर में बुलाने की बात तो दूर हमारा मुँह भी नहीं देखा, हमसे मिलने भी नहीं आ सकी। खाने को भी दुर्गन्धित, फफूंद, कीड़े लगा भोजन कोयले के साथ भेजा। कुछ सहयोग भी नहीं किया। आज जब हमारे पास पुनः धन–सम्पत्ति आ गयी है तब बड़ा स्नेह जता रही हो।'' बेटी ने माता–पिता से कहा ''नहीं पिताजी मैंने तो आप सबको उत्तम शुद्ध भोजन भेजा था, साथ में सहयोग के रूप में पाँच बहुमूल्य रत्न भी भेजे थे।'' सेठ ने चिह्नित स्थान को खोदकर थाली निकाली तो देखा उसमें भोजन के साथ पाँच बहुमूल्य रत्न भी चमक रहे थे। रत्नों को देख सेठ का परिवार अचंभित हो गया। उन्होंने तो सड़े–गले भोजन के साथ कोयले के पाँच टुकड़ों को वहाँ अच्छी तरह ढांक कर गाढ़ा था। यहाँ बेटी रत्नों को देख पिता से बोली ''पिताजी यही तो वे बहुमूल्य रत्न हैं जिनसे आप अति उत्तम व्यापार कर सकते थे।'' तब पूरे परिवार ने कहा कि ''हम सबने धन के मद में 'रोट तीज व्रत' को निंदापूर्वक छोड़ दिया था। हमारे उसी पापोदय से तुम्हारे भेजे रत्न भी हमारे पास आकर कोयला बन गये थे।'' इस पाप के उदय से ही हमें हर जगह विफलता मिली। आपत्ति, अपमान, लांछन व शारीरिक कष्ट भी सहना पड़ा। धन–सम्पत्ति, व्यापार, इज्जत सब कुछ डूब गया। कोई सहयोग देकर भी हमें सहयोग नहीं कर पाया। अब पुनः जब हम सबने अपने पाप का हृदय से पश्चात्ताप किया, पुनः व्रत किया तो व्रत करते ही सर्व पुण्य संपदा पुनः प्राप्त

हो गई। इस व्रत की महिमा अपरम्पार है। संसार में जिनधर्म ही सबसे महान व हितकारी है। सच्चे देव–शास्त्र–गुरु ही हमारे सच्चे हितैषी, सच्चे उद्धारक हैं। जिनधर्म की जय–जयकार करते हुए सभी अपने–अपने स्थान को चले गये।

सेठ सागरदत्त अपने परिवार के साथ उज्जैन शहर में आये। उनके पहुँचते ही उनका मकान पुनः जगमगा उठा। हीरे, मोती, रत्न, छप्पन करोड़ स्वर्ण मुद्राएँ उन्हें पूर्व रूप में प्राप्त हो गई। व्यापारादि हर कार्यों में अब दिन–दूनी रात–चौगुनी सफलता मिलने लगी। घर–घर में रोट तीज व्रत की महिमा फैल गई। अब वह परिवार धार्मिक कार्यों में भी बढ़–चढ़कर भाग लेने लगा। उस व्रत के फलस्वरूप उन्होंने आगे मोक्ष स्वर्गादि उत्तम सुखों को प्राप्त किया।

अतः हमें भी सच्चे जिनधर्म व धर्मात्मा का अपमान, तिरस्कार नहीं करना चाहिये। किसी भी व्रत की निंदा नहीं करना चाहिये। शक्ति अनुसार श्रद्धापूर्वक व्रत करके अक्षय सुख प्राप्त करना चाहिये। स्वयं व्रत करें एवं इसकी महिमा बताकर अन्य को यह व्रत करने की प्रेरणा दें।

इति–अलम् ! वर्धताम् जिनशासनम् !

–संकलन प्रस्तुति

आचार्य गुप्तिनंदी

क्यों करें ये विधान ?

* यदि आपके द्वारा जाने-अनजाने कोई व्रत भंग हुआ हो, कोई व्रत भंग हो, कोई व्रत या नियम आपसे टूट गया हो या छूट गया हो ?
* यदि आपको व्यापार या नौकरी में निरन्तर हानि हो रही हो ?
* यदि बार-बार चोरी या छापा पड़ता हो ?
* यदि आपके घर में पैसा नहीं रुकता हो ?
* यदि आपको नौकरी में सफलता नहीं मिल रही हो ?
* यदि आप बेरोजगारी से परेशान हो ?
* यदि आप कर्ज के बोझ से परेशान हो ?
* यदि आपकी उधारी डूब जाती हो ?
* इत्यादि धन व अंतराय कर्म संबंधी अनेक समस्याओं का समाधान है।

***

पूजन की थाली में निम्नलिखित श्लोक बोलते हुए स्वस्तिक बनायें व अंक लिखें-

श्लोक- **रयणत्तयं च वंदे चउवीस जिणे च सव्वदा वंदे।**
पञ्च गुरूणां वंदे चारण-चरणं च सव्वदा वंदे॥

3

2 卐 24

5

विनय पाठ

(दोहा)

प्रथम जिनेश्वर देव हो, वीतराग सर्वज्ञ।
हित उपदेशी नाथ तुम, ज्ञानरवि मर्मज्ञ॥1॥
केवलज्ञानी बन प्रभो, हरा जगत अंधियार।
तीन लोक के बंधु बन, किया जगत उपकार॥2॥
धर्म देशना से मिला, जग को दिव्य प्रकाश।
तव चरणों में नित रहे, यही करें अरदास॥3॥
कर्म बेड़ियाँ तोड़ने, भक्ति करें त्रयकाल।
तीन योग से हे प्रभो !, चरणों में नत भाल॥4॥
चतुर्गति भव भ्रमण से, तारों हमें जिनेश।
दयानिधि जिन ! कर दया, हरलो पाप विशेष॥5॥
प्रभुवर पूजा आपकी, सर्व रोग विनशाय।
विष भी अमृत हो प्रभो !, शत्रु मित्र बन जाय॥6॥
हलधर बलधर चक्रधर, अर्चा के उपहार।
परम्परा जिनभक्ति से, दे प्रभु पद उपहार॥7॥
बड़े पुण्य से जिन मिले, मिला प्रभु का द्वार।
मुक्त करो त्रय रोग से, विनती बारम्बार॥8॥
हम सेवक प्रभु आपके, हे अबोध ! अनजान।
राग-द्वेष अज्ञान हर, दे दो सच्चा ज्ञान॥9॥

मंगल उत्तम शरण है, मंगलमय जिनधर्म।
मंगलकारी सब गुरु, हरो हमारे कर्म॥10॥
चौबीसों जिनवर नमूँ, नमन पंच परमेश।
जिनवाणी गणधर गुरु, 'आस्था' नमें हमेश॥11॥

दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

पूजा आरंभ (हिन्दी)

ॐ जय-जय-जय - नमोस्तु-नमोस्तु-नमोस्तु।
णमो अरिहन्ताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं॥

(ॐ ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः परिपुष्पाञ्जलि क्षिपामि)

चत्तारि मंगलं, अरिहन्ता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा। चत्तारि सरणं पवज्जामि, अरिहंते सरणं पवज्जामि, सिद्धे सरणं पवज्जामि, साहू सरणं पवज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पवज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा, पुरिपुष्पाञ्जलि क्षिपामि।

णमोकार मंत्र महिमा

(चौपाई)

अपवित्र या जन पवित्र हो, सुस्थित हो या दुस्थित भी हो।
नमस्कार मंत्रों को ध्यायें, पापों से छुटकारा पायें॥1॥
सर्व अवस्था में भी ध्यायें, पापी भी पावन बन जाये।
जो सुमिरे नित परमातम को, अन्दर बाहर शुचि बने वो॥2॥
अपराजित ये मंत्र कहाता, सब विघ्नों को दूर भगाता।
सब मंगल में मंगलकारी, प्रथम सुमंगल जग उपकारी॥3॥
महामंत्र णवकार हमारा, सब पापों से दे छुटकारा।
सब मंगल में प्रथम कहाता, महामंत्र मंगल कहलाता॥4॥

परम ब्रह्म परमेष्ठी वाचक, सिद्धचक्र सुन्दर बीजाक्षर।
मैं मन-वच-काया से नमता, नमस्कार मंत्रों को करता॥5॥
अष्टकर्म से मुक्त जिनेश्वर, श्रीपति जिन मंदिर परमेश्वर।
सम्यक्त्वादि गुणों के स्वामी, नमस्कार मैं करता स्वामी॥6॥
जिनवर की संस्तुति करने से, मुक्ति मिले सारे विघ्नों से।
भूतादि का भय मिट जाता, विष निर्विष निश्चित हो जाता॥7॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरूसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे कल्याणमहंयजे॥1॥

ॐ ह्रीं श्री भगवतो गर्भजन्मतपज्ञाननिर्वाण पंचकल्याणकेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरूसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिनइष्टमहंयजे॥2॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हंत्सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उदकचंदनतंदुलपुष्पकैश्चरूसुदीपसुधूपफलार्घकैः।
धवलमंगलगानरवाकुले जिनगृहे जिननाममहंयजे॥3॥

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनसहस्रनामेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वस्ति मंगल विधान

(शंभु छंद)

श्री मज्जिनेन्द्र हो विश्ववंद्य, तुम तीन जगत के ईश्वर हो।
तुम चऊ अनंत गुण के धारी, स्याद्वाद धर्म परमेश्वर हो॥
श्री मूल संघ की विधि से मैं, अपना बहु पुण्य बढ़ाने को।
मैं मंगल पुष्प चढ़ाता हूँ, जिन पूजा यज्ञ रचाने को॥1॥
त्रैलोक्य गुरु हे जिनपुंगव !, मैं तुमको पुष्प चढ़ाता हूँ।
अपने स्वभाव में सुस्थित जिन, मैं तुमको पुष्प चढ़ाता हूँ॥
सम्पूर्ण रत्नत्रय के धारी, मैं तुमको पुष्प चढ़ाता हूँ।
हे समवशरण वैभव धारी, मैं तुमको पुष्प चढ़ाता हूँ॥2॥
अविराम प्रवाहित ज्ञानामृत, सागर को पुष्प समर्पित है।
निज परभावों के भेद विज्ञ, जिनवर को पुष्प समर्पित है॥

त्रिभुवन को सारे द्रव्यों के, नायक को पुष्प समर्पित है।
त्रैकालिक सर्व पदार्थों के, ज्ञायक को पुष्प समर्पित है॥3॥
पूजा के सारे द्रव्यों को, श्रुत सम्मत शुद्ध बनाया है।
यह भाव शुद्धि के अवलम्बन, द्रव्यों को शुद्ध सजाया है॥
शुचि परमातम का अवलम्बन, आतम को शुद्ध बनाता है।
उसको पाने हे जिन ! तेरी, यह पूजा भव्य रचाता है॥4॥
अर्हत् पुराण पुरुषोत्तम जिन, उनमें न सचमुच गुरुता है।
मैं भी स्वभाव से उन सम हूँ, मुझमें न निश्चय लघुता है॥
प्रभु से हो एकाकार मेरा, मैं ऐसी भक्ति रचाता हूँ।
केवल ज्ञानाग्नि में अपना, मैं पुण्य समग्र चढ़ाता हूँ॥5॥

ॐ ह्रीं जिनप्रतिमोऽपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

स्वस्ति मंगल पाठ

(चौपाई)

वृषभ सुमंगल करे हमारा, अजित सुमंगल करे हमारा।
संभव स्वामी मंगलकारी, अभिनंदन हैं मंगलकारी॥1॥
सुमतिनाथ हैं मंगलकारी, पद्मप्रभु हैं मंगलकारी।
श्री सुपार्श्व जिन मंगलकारी, चंद्रप्रभु हैं मंगलकारी॥2॥
पुष्पदंत हैं मंगलकारी, शीतल स्वामी मंगलकारी।
श्री श्रेयांस जिन मंगलकारी, वासुपूज्य हैं मंगलकारी॥3॥
विमलनाथ हैं मंगलकारी, श्री अनंत जिन मंगलकारी।
धर्मनाथ हैं मंगलकारी, शांतिनाथ हैं मंगलकारी॥4॥
कुंथुनाथ हैं मंगलकारी, अरहनाथ हैं मंगलकारी।
मल्लिनाथ हैं मंगलकारी, मुनिसुव्रत हैं मंगलकारी॥5॥
नमि जिनवर हैं मंगलकारी, नेमीनाथ हैं मंगलकारी।
पार्श्वनाथ हैं मंगलकारी, वीर जिनेश्वर मंगलकारी॥6॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

स्वस्ति मंगल विधान

(यहाँ प्रत्येक श्लोक के अंत में पुष्पाञ्जलि क्षेपण करना चाहिए।)

नित्य अचल क्षायिक ज्ञानधारी, विशुद्ध मनःपर्यय ज्ञानधारी।
देशावधि आदि युत ऋषि मुनिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥1॥
महाकोष्ठ बीजबुद्धि पदानुसारि, संभिन्न संश्रोतृ स्वयं बुद्धिधारी।
प्रत्येकबुद्ध-बोधिबुद्ध ऋषिवर, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥2॥
अभिन्नदशपूर्व-चतुर्दश पूर्वी, दिव्य मतिज्ञान महाबलधारी।
अष्टांगनिमित्त ज्ञाता ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥3॥
स्पर्श-चक्षु-कर्ण-घ्राण-रसना, आदि प्रबल इन्द्रिय के धारी।
महाशक्तिवन्त जिनमुनि-यति-ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥4॥
फल-तन्तु-नीर-जंघा-श्रेणी, पुष्प-बीज-अंकुर-रवि-अग्नि-गामी।
नभ-जल-वायुचारण ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥5॥
अणु-महालघु-गुरुऋद्धिधारी, सकामरूपित्व-वशित्वधारी।
वर्द्धमान बल के धारी गुरुवर, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥6॥
मन औ वचनबल-कायबल ऋद्धि, प्राकाम्य-अप्रतिघात गुणधारी।
विक्रिया-क्रियाऋद्धि धारी गुरुवर, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥7॥
उग्रोग्रतप-दीप्त-तप-तप्ततपसी, अवस्थित-उग्रतप-महातपऋद्धि।
तपो-लब्धि आदि से युक्त ऋषिगण, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥8॥
आमर्ष-सर्वौषध ऋद्धिधारी, आषीर्विष-दृष्टिविष बल धारी।
सखिल्ल-विडजल्ल-मल्लौषधियुक्त, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥9॥
क्षीरास्रवी-घृतस्रावी मुनीश्वर, अमृत-मधु-महारस के धारी।
अक्षीणआलय-महानस आदि, स्वस्ति सदा हो उन चरणों में॥10॥

इति परमर्षि स्वस्ति मंगल विधानं

(9 बार णमोकार मंत्र का जाप करें)

श्री नित्यमह पूजा

रचियित्री : ग. आर्यिका राजश्री माताजी

शंभु छन्द *(तर्ज– हे वीर तुम्हारे...)*

अरिहंत, सिद्ध, सूरी, पाठक, साधु और जिनवर चौबीसों।
गणधर जिन पंच बालयतिवर, जिन आगम गुरु प्रभुवर बीसों।।
माँ जिनवाणी, निर्वाणभूमि, रत्नत्रय, दशलक्षण प्यारा।
नंदीश्वर पंचमेरू जिनवर, जिनचैत्य चैत्यालय मनहारा।।
जिनधर्म जिनागम बाहुबली, सोलहकारण पूजन करता।
इनका आह्वानन करके मैं, श्री मोक्ष महल का सुख वरता।।1।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्र ! अत्र अवतर–अवतर संवौषट् आह्वानम्।
ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ–तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव–भव वषट् सन्निधिकरणम्।

नरेन्द्र छन्द *(तर्ज : माइन–माइन...)*

धीर वीर गंभीर प्रभु की अर्चा मैं नित करता हूँ।
निर्मल जल की त्रय धारा दे जन्म–जरा–मृत हरता हूँ।।
देव–शास्त्र–गुरु बीस तीर्थंकर जिनवाणी गणधर पूजा।
त्रय चौबीसी रत्नत्रय नंदीश्वर दशलक्षण पूजा।।
सोलहकारण बाहुबली निर्वाणभूमि वा नवदेवा।
पंच परम परमेष्ठी पद की करते उत्तम सेवा।।1।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल चंदन चरण चढ़ाता शीतलता मुझको देना।
भव का बन्धन हरने वाले भव की ज्वाला हर लेना।। देव शास्त्र..।।2।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धवल मनोहर अक्षत लाया अक्षयपद पाने हेतू।
अक्षयपद को देने वाली पूजन है सबका सेतू ।। देव शास्त्र..।।3।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जल भूमिज बहु पुष्प चढ़ाऊँ श्रद्धा से जिन गुण गाऊँ।
कामबाण को वश में करके मन ही मन मैं हर्षाऊँ ॥
देव-शास्त्र-गुरु बीस तीर्थंकर जिनवाणी गणधर पूजा।
त्रय चौबीसी रत्नत्रय नंदीश्वर दशलक्षण पूजा॥
सोलहकारण बाहुबली निर्वाणभूमि वा नवदेवा।
पंच परम परमेष्ठी पद की करते उत्तम सेवा॥4॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो कामबाणविनाशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पुआ पकौडी रबड़ी घेवर आदिक व्यंजन मैं लाया।
क्षुधावेदनी के भेदन को प्रभु सन्मुख दौड़ा आया॥ देव शास्त्र..॥5॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जगमग दीपों की थाली ले आरती प्रभु की गाऊँगा।
मोहकर्म का नाश मेरा हो सम्यक्भाव बनाऊँगा॥ देव शास्त्र..॥6॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप धूपायन में खेकर मैं अष्टकर्म का हनन करूँ।
प्रभु प्रतिमा के दर्शन करके निज स्वभाव का वरण करूँ॥ देव शास्त्र..॥7॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे मीठे फल से अर्चा मनवांछित फल देती है।
प्रभु की अर्चा मेरे जीवन के संकट हर लेती है॥ देव शास्त्र..॥8॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीरादिक आठों द्रव्यों का सुन्दर थाल सजाया है।
पद अनर्घ्य की अभिलाषा से भक्तिभाव जगाया है॥ देव शास्त्र..॥9॥

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : वीतराग भगवान की, पूजा सब सुख खान।
त्रयधारा जल की करूँ, छोडूँ सब अभिमान॥

शांतये शांतिधारा।

दोहा– काम सृष्टि का नाश हो, पुष्पवृष्टि के साथ।
पुष्पांजलि क्षेपण करूँ, पूर्ण विनय के साथ॥

दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

जाप्य मंत्र : ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो नमः स्वाहा। (9, 27 या 108 बार जाप करें)

जयमाला

दोहा : जयमाला की माल से, गूंजे जय–जयकार।
जयमाला हम पढ़ रहे, मिलकर सब नर–नार॥

शंभु छन्द *(तर्ज : ये देश है वीर...)*

श्री वीतराग सर्वज्ञ हितैषी अरिहंतों को नमन करूँ।
श्री सिद्ध सूरी पाठक साधु जिनचैत्य जिनालय नमन करूँ॥
सब द्वीपों के प्रभुवर न्यारे सीमंधर आदिक को ध्याऊँ।
श्री पंचमेरू अरू नंदीश्वर के चैत्यालय के गुण गाऊँ॥1॥

दशलक्षणधर्म हृदय धारूँ सोलहकारण भावन भाऊँ।
रत्नत्रय धारण करने के सम्यक् साधन को अपनाऊँ॥
चौदह सौ बावन गणधर जी सब ऋद्धि–सिद्धि देने वाले।
प्रभु के पाँचों कल्याणक भी सबका संकट हरने वाले॥2॥

जिनवर के सब जन्मस्थल को करता हूँ मैं शत–शत वंदन।
श्रावस्ती कौशाम्बी काशी अयोध्या चंद्रपुरी वंदन॥
काकंदी राजगृही मिथिला चंपापुर कुंडलपुर वंदन।
वैशाली सिंहपुरी कम्पिल हस्तिनापुर आदि वंदन॥3॥

अतिशय औ सिद्धक्षेत्र जी का सुमरण सब पाप तिमिर हरता।
मैं चंपा पावा ऊर्जयंत सम्मेदशिखर वंदन करता॥

पावा द्रोणा सोना तुंगी कैलाश चूलगिरी ध्याऊँगा।
रेसंदी मुक्ता उदयरत्न कुंथलगिरी को मैं जाऊँगा।।4।।
विपुलाचल पोदनपुर मथुरा तारंगा गजपंथा वंदन।
श्री सिद्धवरकूट कमलदहजी गुणावा शत्रुंजय वंदन।।
अहिक्षेत्र अणिंदा णमोकार जटवाडा पैठण चंवलेश्वर।
कचनेर चाँदखेड़ी पाटन जिन्तूर तिजारा गोमटेश्वर।।5।।
कुन्थुगिरी नवग्रह धर्मतीर्थ मांडल केशरिया को वंदन।
श्री महावीरजी पदमपुरा ऋषितीर्थ आदि को भी वंदन।।
जय ऊर्ध्व मध्य और अधोलोक के सब चैत्यालय मनहारी।
निर्वाण सिधारे पूज्य पुरुष की पूजा सब संकटहारी।।6।।
श्री राम हनु सुग्रीव नील महानील कुम्भ शम्बु ज्ञानी।
लवमदनांकुश सागर वरदत्त श्री बाहुबली स्वामी ध्यानी।
गौतम जम्बू सुधर्मा श्री त्रय पांडवसुत अनिरूद्ध नमन।
इस ढाईद्वीप से मोक्ष पधारे उन गुरुओं को है वंदन।।7।।
श्री पँचबालयति को ध्यायें नवदेवों की शरणा पायें।
सातिशय पुण्य कमाने को मंगलमय पूजा हम गायें।।
जिनगुण के अनुरागी बनकर संसार भ्रमण का नाश करें।
शिवपुर के राजतिलक हेतु यह 'राज' प्रभुगुण आश करे।।8।।

ॐ ह्रीं श्री समुच्चय जिनेन्द्रेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा : श्री जिन के आशीष से, प्रगटाऊँ निज ज्ञान।
पूजन-कीर्तन-भजन से 'राज' वरे शिव थान।।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

श्री रोट-तीज व्रत उद्यापन विधान मांडला

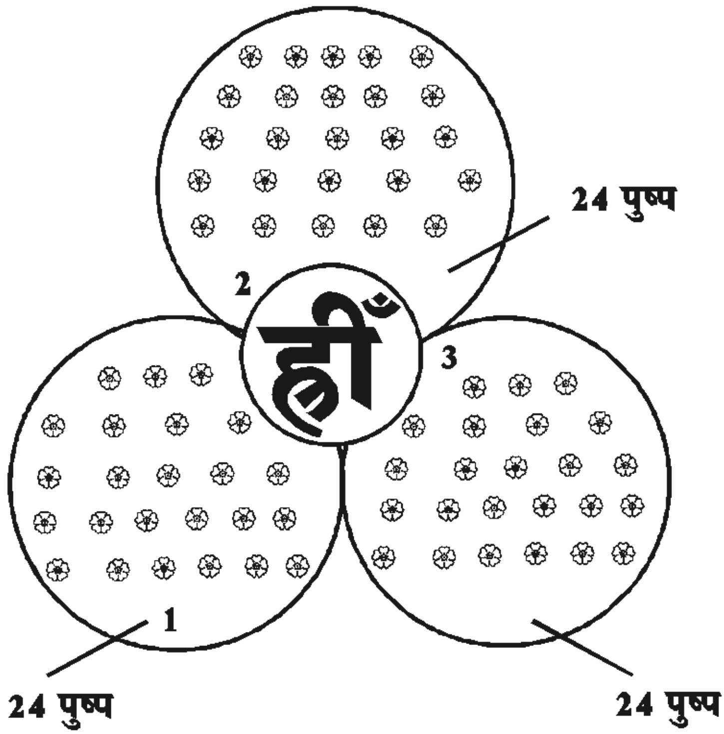

नोट : यह मण्डल तीन खाने का बनता है।

प्रथम खण्ड – भूतकाल के 24 तीर्थंकर के 24 अर्घ

द्वितीय खण्ड – वर्तमानकाल के 24 तीर्थंकर के 24 अर्घ

तृतीय खण्ड – भविष्यत्काल के 24 तीर्थंकर के 24 अर्घ

इस प्रकार (24+24+24) कुल 72 अर्घ चढ़ाये जाते हैं।

श्री त्रिकाल चौबीसी विधान

(श्री रोट-तीज व्रत उद्यापन)

स्थापना (नरेन्द्र छन्द)

त्रयकालिक चौबीस जिनेश्वर, त्रय विध कर्म विनाशें।
वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, शाश्वत धर्म प्रकाशें।।
उनका हम आह्वान करें नित, मन ही मन हर्षायें।
भरत क्षेत्र के तीन काल के, सब जिनवर को ध्यायें।।

ॐ ह्रीं श्री भूत-वर्तमान-भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकर समूह अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वानं।

ॐ ह्रीं श्री भूत-वर्तमान-भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकर समूह अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः-ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्री भूत-वर्तमान-भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकर समूह अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणं।

नरेन्द्र छन्द

द्रव्यभाव नोकर्म जयी जिन, जन्मादिक् त्रय हरते हैं।
उनके सम्मुख त्रय योगों से, जल की धारा करते हैं।।
त्रैकालिक चौबीसी व्रत की, पूजा भव्य रचायें हम।
पूजन अर्चन कीर्तन करके, सब दुःख शोक मिटायें हम।।1।।

ॐ ह्रीं श्री भूत-वर्तमान-भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनवर की शीतल छाया, भव संताप मिटाती है।
प्रभु चरणों में चंदन लेपन, अभिनंदन दिलवाती है।। त्रैकालिक...।।2।।

ॐ ह्रीं श्री भूत-वर्तमान-भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय व्रत ले अक्षय तपकर, अक्षय पद को पाया है।
निज अक्षय सुख की आशा से, अक्षत उन्हें चढ़ाया है।।
त्रैकालिक चौबीसी व्रत की, पूजा भव्य रचाये हम।
पूजन अर्चन कीर्तन करके, सब दुःख शोक मिटाये हम।।3।।

ॐ ह्रीं श्री भूत–वर्तमान–भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

निज मन वा मन्मथ को वशकर, मदन विजेता कहलाये।
उन्हें चढ़ाने कमल मालती, सुमन मनोहर मँगवाये।। त्रैकालिक...।।4।।

ॐ ह्रीं श्री भूत–वर्तमान–भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो कामबाण विनाशनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा।

रोट बना घृत खीर सजा, हम भर–भर थाल चढ़ायेंगे।
क्षुधा विजेता के चरणों में, क्षुधा रोग विनशायेंगे।। त्रैकालिक...।।5।।

ॐ ह्रीं श्री भूत–वर्तमान–भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत के सुन्दर दीप जलाये, जगमग–जगमग दीप जलें।
मोह तिमिर विनशाने वाला, मन में प्रज्ञा दीप जले।। त्रैकालिक...।।6।।

ॐ ह्रीं श्री भूत–वर्तमान–भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मरूप ईंधन को प्रभु ने, ध्यानानल में दहन किया।
सुरभित धूप चढ़ा प्रभु सन्मुख, हमने दुःख का दहन किया।। त्रैकालिक...।।7।।

ॐ ह्रीं श्री भूत–वर्तमान–भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सफल महाव्रत सिद्ध करें जो, शाश्वत शिवफल पाते हैं।
शिवफल की अभिलाषा ले हम, हरे–भरे फल लाते हैं।। त्रैकालिक...।।8।।

ॐ ह्रीं श्री भूत–वर्तमान–भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

पद अनर्घ के धारक जिनवर, पद अनर्घ हमको दे दो।
अष्ट द्रव्य का अर्घ चढ़ाता, अष्ट कर्म सारे हर लो॥
त्रैकालिक चौबीसी व्रत की, पूजा भव्य रचाये हम।
पूजन अर्चन कीर्तन करके, सब दुःख शोक मिटाये हम॥9॥

ॐ ह्रीं श्री भूत-वर्तमान-भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥9॥

दोहा- त्रयकालिक चौबीस जिन, करें सकल अघ शांत।
शांतिधार सुमनावली, नाशे कर्मज क्लांत॥

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्

अथ मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्

श्री भूतकाल चौबीसी के अर्घ

अडिल्ल छंद

श्री 'निर्वाण' प्रभु ने निज निर्वाण कर।
मार्ग बताया भव्यों को कल्याण कर॥
भूतकाल के तीर्थंकर चौबीस हैं।
जो उनको पूजे बनता जगदीश है॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'निर्वाण' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

'सागर' भवदधि तर गुण रत्नाकर वरें।
आप शरण भवि आकर गुण गागर भरें॥ भूतकाल ... ॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'सागर' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

'महासाधु' ने करी महाव्रत साधना।
फिर त्रिभुवन ने की उनकी आराधना॥ भूतकाल ... ॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'महासाधु' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

नाथ 'विमलप्रभ' का यह विमल प्रभाव है।
क्रूर हिंस्र जीवों में भी समभाव है ।।
भूतकाल के तीर्थंकर चौबीस हैं।
जो उनको पूजे बनता जगदीश है।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'विमलप्रभ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'श्रीधर' जिन अन्तर बाहिर श्री के धनी।
जग में बाँटे ज्ञान सुधा संजीवनी।। भूतकाल ... ।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'श्रीधर' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तीर्थंकर 'श्री सुदत्त' मुक्ति दे रहे।
उनकी अर्चा कर हम शिवश्री ले रहे।। भूतकाल ... ।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'सुदत्त' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

देव 'अमलप्रभ' अमल देशना के धनी।
जिसको युगपत झेल रहे नाना गणी।। भूतकाल ... ।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'अमलप्रभ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

सब जीवों का करते जो उद्धार हैं।
श्री 'उद्धर' प्रभुवर का मनहर द्वार है।। भूतकाल ... ।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'उद्धर' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

ध्यानानल से निज आतम कुंदन किया।
'अंगिर' जिन को हम सबने वंदन किया।। भूतकाल ... ।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'अंगिर' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

मिथ्यामति हरते देते सम्यक् मति।
सन्मति दाता तीर्थंकर जिन 'सन्मति'।। भूतकाल ... ।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'सन्मति' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

हैं अथाह गुण सागर श्री जिन 'सिंधु' में।
हम हो तन्मय प्रभो आप गुण सिंधु में।।
भूतकाल के तीर्थंकर चौबीस हैं।
जो उनको पूजे बनता जगदीश है।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'सिंधु' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'कुसुमांजलि' के पग तल कुसुम खिलें सदा।
कुसुमांजलि अपर्ण करते हम सर्वदा।। भूतकाल ... ।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'कुसुमांजलि' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

शिवपुर राही 'शिवगण' जिन जग श्रेष्ठ हैं।
शिवसुख पाने इनकी चर्या ज्येष्ठ हैं।। भूतकाल ... ।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'शिवगण' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

अर्चा जिनकी हमें सदा उत्साह दे।
धर्म प्रेम सीखें जिनवर 'उत्साह' से।। भूतकाल ... ।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'उत्साह' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

हम सबको वर 'ज्ञानेश्वर' का मिल रहा।
मुक्ति महल का द्वार प्रभु से खुल रहा।। भूतकाल ... ।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'ज्ञानेश्वर' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'परमेश्वर' ने परम धर्म पाया महा।
परम पिता की अर्चा हम करते यहाँ।। भूतकाल ... ।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'परमेश्वर' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'श्री विमलेश्वर' विमल ज्ञान दे दो हमें।
उनके चरणों में यह मन पंकज रमें।। भूतकाल ... ।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'विमलेश्वर' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

निर्मल यश जिनका त्रिभुवन में व्याप्त है।
दोष अठारह रहित 'यशोधर' आप्त हैं।।
भूतकाल के तीर्थंकर चौबीस हैं।
जो उनको पूजे बनता जगदीश है।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'यशोधर' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'कृष्णमति' जिन कर्मजमति को कृश करें।
दुर्मतियों को आप सहज में वश करें।। भूतकाल ... ।।19।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'कृष्णमति' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'ज्ञानमति' का ज्ञान ज्ञेय के पार है।
अज्ञ जनों का भी करते उद्धार वे।। भूतकाल ... ।।20।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'ज्ञानमति' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'शुद्धमति' जिन सुमति सुगति दातार हैं।
आप नाम ही जीवन का आधार है।। भूतकाल ... ।।21।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'शुद्धमति' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

भद्रजीव 'श्रीभद्र' प्रभु के भक्त हैं।
भद्रभाव चर्या से होते युक्त वे।। भूतकाल ... ।।22।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'श्रीभद्र' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'अतिक्रान्त' ने जीता कर्मज क्लांत को।
मैं भी पूजूँ मेरे सब अघ शांत हो।। भूतकाल ... ।।23।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'अतिक्रान्त' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

शांतिप्रदाता अंतिम जिनवर 'शांत' हैं।
तुम शरणागत बने आप सम शांत हैं।। भूतकाल ... ।।24।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'शांत' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

पूर्णार्घ

भरत क्षेत्र की गत चौबीसी को भजूँ।
अष्ट द्रव्य ले भक्ति से जिन गुण जजूँ॥
भूतकाल के तीर्थंकर चौबीस हैं।
जो उनको पूजे बनता जगदीश है॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीप वर्ती भरतक्षेत्रस्थ श्री निर्वाणादिशांतपर्यंत भूतकाल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्

वर्तमान चौबीसी के अर्घ

दोहा– नाभिराय के लाडले मरूदेवी के लाल।
'वृषभनाथ' भगवान को वंदन करूँ त्रिकाल॥
वर्तमान युग में हुए तीर्थंकर चौबीस।
अर्घ चढ़ा पूजन करूँ सदा झुकाऊँ शीश॥1॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'वृषभनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

दोष अठारह जीतकर 'अजितनाथ' भगवान।
धर्म प्रवर्तन कर रहे गायें हम यशगान॥ वर्तमान.... ॥2॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'अजितनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

भव–भव के जंजाल को काटे 'संभवनाथ'।
भव बंधन मेरा कटे भक्तिभाव के साथ॥ वर्तमान.... ॥3॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'संभवनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

'अभिनंदन' की साधना अभिवंदन के योग्य।
नंदन मैं प्रभु का बनूँ मिले यही संयोग॥ वर्तमान.... ॥4॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'अभिनंदननाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

'सुमतिनाथ' करते सदा सुमति सुगति का दान।
उनकी अर्चा से करूँ भावों का उत्थान।।
वर्तमान युग में हुए तीर्थंकर चौबीस।
अर्घ चढ़ा पूजन करूँ सदा झुकाऊँ शीश।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'सुमतिनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

पद्मासन से भी अधर, बैठे 'पद्म' जिनेश।
पद्म चढ़ा वंदन करूँ, काटो कर्मन् क्लेश।। वर्तमान.... ।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'पद्मप्रभ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री 'सुपार्श्व' के दर्श से छूटे अघ का पाश।
अर्चन पूजन भक्ति से पाऊँ मुक्ति निवास।। वर्तमान.... ।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'सुपार्श्वनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

चन्द्र चिह्न से युक्त हैं 'चन्द्रनाथ' भगवान।
कोटि चन्द्र से भी अधिक प्रभु का तेज महान्।। वर्तमान.... ।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'चन्द्रप्रभ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'पुष्पदंत' ने ध्यान से किया कर्म का अंत।
दिव्य देशना से किया सरल मोक्ष का पंथ।। वर्तमान.... ।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'पुष्पदंतनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

चौरासी लख शील को पालें 'शीतलनाथ'।
शीलव्रतों को साधने मिले प्रभु का साथ।। वर्तमान.... ।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'शीतलनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्रेयमार्ग दातार हैं तीर्थंकर 'श्रेयांस'।
श्रेयस्कर सन्मार्ग में तन्मय हो मम श्वास।। वर्तमान.... ।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'श्रेयांस' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'वासुपूज्य' भगवान हैं अष्टम वसुधाधीश।
जिनके चरणों में नमें गणधर सुर चक्रीश॥
वर्तमान युग में हुए तीर्थंकर चौबीस।
अर्घ चढ़ा पूजन करूँ सदा झुकाऊँ शीश॥12॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'वासुपूज्य' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

'विमलनाथ' के नाम से होता मल का नाश।
विमलज्ञान पा मैं करूँ, अष्टम वसुधा वास॥ वर्तमान... ॥13॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'विमलनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

अंत किया भव सिंधु का बन 'अनंतभगवान'।
उनके शुभ आशीष से पाऊँ सम्यक्ज्ञान॥ वर्तमान... ॥14॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'अनंतनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

धर्म सभा की हैं धुरी 'धर्मनाथ' भगवान।
धर्म चक्र चहुँ दिश लिए चलते यक्ष प्रधान॥ वर्तमान... ॥15॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'धर्मनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

जिन सोलहवें तीर्थंकर कामदेव चक्रीश।
'शांतिनाथ' के द्वार में सदा रहूँ नत शीश॥ वर्तमान... ॥16॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'शांतिनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

कुन्थुवादिक लघु जीव के 'कुंथुनाथ' प्रतिपाल।
त्रयपद धारी तीर्थंकर पूजूँ नित्य त्रिकाल॥ वर्तमान... ॥17॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'कुंथुनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

निज अर जीते 'अरह' ने अर्हत् बने महान।
धर्म चक्र, नयचक्र धर, अखिल गुणों की खान॥ वर्तमान... ॥18॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'अरहनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

कर्ममल्ल जीते सहज 'मल्लिनाथ' जिनराज।
मोहमल्ल निज जीतने भक्ति रचाऊँ आज॥
वर्तमान युग में हुए तीर्थंकर चौबीस।
अर्घ चढ़ा पूजन करूँ सदा झुकाऊँ शीश॥19॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'मल्लिनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

'मुनिसुव्रत' व्रत में निरत मुनिव्रत के दातार।
तुम पद में मम चित्त रत करो भवार्णव पार॥ वर्तमान... ॥20॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'मुनिसुव्रत' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

'नमि' जिनवर निज ज्ञान से नापे लोकालोक।
सौगत शिव, विष्णु तुम्हीं हरो सकल दुःख शोक॥ वर्तमान... ॥21॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'नमिनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

राजुल, राज, विलास तज, युवा 'नेमीकुमार'।
अर्हत् हो गिरनार से करते धर्म प्रचार॥ वर्तमान... ॥22॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'नेमिनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

पद्मावती धरणेन्द्र को णमोकार से तार।
आत्मसाधना से बने जिनवर 'पार्श्वकुमार॥ वर्तमान... ॥23॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'पार्श्वनाथ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

वर्तमान शासन पती 'वर्धमान' भगवान।
तुम सम निर्मल व्रत पले इतना दो वरदान॥ वर्तमान... ॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'वर्द्धमान' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

पूर्णार्घ

'वृषभनाथ' को आदि ले अन्तिम जिन महावीर।
निज शासन गत भव्य को पहुँचावें भवतीर॥ वर्तमान... ॥25॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपवर्ती भरतक्षेत्रस्थ श्री वृषभादि वर्द्धमानपर्यंत वर्तमानकाल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अथ मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्

श्री भविष्यत्काल चौबीसी के अर्घ

नरेन्द्र छंद

आगत चौबिस तीर्थंकर में 'महापद्म' जिन होवेंगे।
श्रेणिक राज धन्य उस युग में प्रथम देशना देवेंगे।।
भरत क्षेत्र के भावि चौबिस जिनवर को हम ध्याते हैं।
पूजन वंदन कीर्तन करके उत्तम अर्घ चढ़ाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'महापद्म' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

श्री 'सुरदेव' सुरों से पूजित कर्म शत्रु का नाश करें।
उत्तम स्वर में प्रभु गुण गाकर हम निज ज्ञान विकास करें।।
भरत क्षेत्र.........।।2।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'सुरदेव' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

षोडशकारण शुभ भावों को श्री 'सुपार्श्व' ने ध्याया है।
जग मंगल से पूर्व स्वयं का मंगल योग बनाया है।।
भरत क्षेत्र.........।।3।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'सुपार्श्व' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

देव 'स्वयंप्रभ' स्वयंप्रभा से धर्म प्रभाव बताते हैं।
उनकी आभा पाने को हम चरण कमल को ध्याते हैं।।
भरत क्षेत्र.........।।4।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'स्वयंप्रभ' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

बिन आयुध 'सर्वात्मभूत' जिन तीन लोक पर विजय करें।
कर्म विजेता शिवपथ नेता जिनवर का हम विनय करें।।
भरत क्षेत्र.........।।5।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'सर्वात्मभूत' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'देवपुत्र' ने दिव्यज्ञान से दिव्यसूत्र बतलाये हैं।
तुम सम दिव्य सूत्र पाने हम शरण तुम्हारी आये हैं।।
भरत क्षेत्र के भावि चौबिस जिनवर को हम ध्याते हैं।
पूजन वंदन कीर्तन करके उत्तम अर्घ चढ़ाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'देवपुत्र' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तीर्थंकर 'कुलपुत्र' कुलंकर कुलभानु कुलदीपक हैं।
हितउपदेशक शिवमगदर्शक, आत्मदीप संदीपक हैं।।
भरत क्षेत्र.........।।7।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'कुलपुत्र' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

देव 'उदंक' महौषध ज्ञाता कर्मशत्रु का दंश हरें।
जिन गुण से अनुराग लगा हम निज कर्मों को ध्वंस करें।।
भरत क्षेत्र.........।।8।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'उदंक' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

आत्मपृष्ठ से कर्मपृष्ठ का पृष्ठ जिन्होंने विनशाया।
उन 'प्रौष्ठिल' तीर्थंकर जिन को हमने मन में बिठलाया।।
भरत क्षेत्र.........।।9।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'प्रौष्ठिल' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जो जिनशासन की जयकीर्ति तीनों जग में पहुँचायें।
जय-जयकार करें सब जिनकी 'जयकीर्ति' जिन कहलायें।।
भरत क्षेत्र.........।।10।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'जयकीर्ति' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'मुनिसुव्रतजिन' व्रत-सुव्रत से भव्यों का उत्थान करें।
हम भी उन सम व्रत अपनाकर निज आतम उत्थान करें।।
भरत क्षेत्र.........।।11।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'मुनिसुव्रत' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

अति दुर्धर तप धरकर जिनवर शिव सुख सत्वर पायेंगे।
उन 'अर' जिनवर के गुण गा हम आतम गुण प्रगटायेंगे।।
भरत क्षेत्र के भावि चौबीस जिनवर को हम ध्याते हैं।
पूजन वंदन कीर्तन करके उत्तम अर्घ चढ़ाते हैं।।12।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'अर (अमम)' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

मिथ्या मोह प्रलाप हटाकर पाप ताप संताप हरें।
तीर्थंकर 'निष्पाप' हमारे हमको भी निष्पाप करें।।
भरत क्षेत्र.........।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'निष्पाप' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

इन्द्रिय विषय कषाय विजेता 'निष्कषाय' कहलाते हैं।
श्री जिनवर की सन्निधि पा हम निज कषाय विनशाते हैं।।
भरत क्षेत्र.........।।14।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'निष्कषाय' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

देव 'विपुल' जिन के शासन में मुनियों को बहुमान मिले।
घर-घर दया धर्म की चर्चा चिंतन में शुभ ध्यान मिले।।
भरत क्षेत्र.........।।15।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'विपुल' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

निर्मल भाव महाव्रत निर्मल-निर्मल जिनका ज्ञान रहे।
निर्मल धर्म प्रवर्तक प्रभु का 'निर्मल' जिनवर नाम रहे।।
भरत क्षेत्र.........।।16।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'निर्मल' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

चित्र विचित्र महातप धरकर जो जग का उत्थान करें।
'चित्रगुप्त' जिन की शरणा में हम अपना कल्याण करें।।
भरत क्षेत्र.........।।17।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'चित्रगुप्त' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

पूर्वभवों में साध समाधि 'समाधिगुप्ति' नाम वरा।
आत्मसमाधि साधन हेतु हमने उनका ध्यान धरा।।
भरत क्षेत्र के भावि चौबीस जिनवर को हम ध्याते हैं।
पूजन वंदन कीर्तन करके उत्तम अर्घ चढ़ाते हैं।।18।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'समाधिगुप्त' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

स्वयं बोध पा दीक्षा लेकर देव 'स्वयंभू' कहलाये।
उनकी शिक्षा पथदर्शक बन मोक्षमार्ग पर चलवाये।।
भरत क्षेत्र.........।।19।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'स्वयंभू' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

तीर्थंकर 'अनिवर्तक' जिनने षोडशकारण व्रत साधा।
उनके गुण से प्रीत लगाकर हमने उनको आराधा।।
भरत क्षेत्र.........।।20।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'अनिवर्तक' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

जयकारों से जय मिलती है यह 'जयनाथ' बताते हैं।
कर्म विजय हित श्री जिनवर का हम जयनाद लगाते हैं।।
भरत क्षेत्र.........।।21।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'जय' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'विमलदेव' के विमलज्ञान की आभा मुझको विमल करें।
उनकी अर्चा करके हम सब जिन सूत्रों पर अमल करें।।
भरत क्षेत्र.........।।22।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'विमल' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

'देवपाल' की दिव्यदेशना मुझमें दिव्य प्रकाश भरे।
स्याद्वाद मय दिव्यज्ञान हो मिथ्यातम का नाश करे।
भरत क्षेत्र.........।।23।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'देवपाल' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।

आत्मवीर्य की शक्ति पाकर कर्मवीर्य को क्षीण किया।
'अनंतवीर्य' प्रभु के गुण गा हमने भव दुःख क्षीण किया॥
भरत क्षेत्र के भावि चौबीस जिनवर को हम ध्याते हैं।
पूजन वंदन कीर्तन करके उत्तम अर्घ चढ़ाते हैं॥24॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री 'अनंतवीर्य' जिनेन्द्राय नमः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

समुच्चय अर्घ्य

महापद्म से अनंतवीरज तीर्थंकर सुखकारी हैं।
भरत क्षेत्र के भावि चौबिस जिनवर धर्म प्रचारी हैं॥
इनको अर्घ चढ़ाकर के हम पद अनर्घ पा जायेंगे।
वंदन, पूजन, कीर्तन करके प्रभु का जाप रचायेंगे॥

ॐ ह्रीं अर्हं श्री जम्बूद्वीपवर्ती भरतक्षेत्रस्थ श्री महापद्मादि अनंतवीर्यपर्यंत भविष्यत्काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्

जाप्य मंत्र-ॐ ह्रीं अर्हं श्री भूत-वर्तमान-भविष्यत् काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमो नमः (9, 27 या 108 बार)

जयमाला

दोहा- चौबिस जिन त्रयकाल के पूजूँ मैं त्रयकाल।
रोट-तीज व्रत की पढ़ूँ दुःखहारी जयमाल॥

शंभु छन्द

मैं भरत क्षेत्र के महापुरुष, तीर्थंकर के गुण गाता हूँ।
श्री भूत भविष्यत् वर्तमान, चौबीसों जिन को ध्याता हूँ॥
त्रय चौबीसी की पूजा से, शुभ रोट तीज व्रत होता है।
जो विधि से इस व्रत को करता, वो नव लब्धिपति होता है॥1॥

प्रभु सन्मति ने नृप श्रेणिक को, यह मंगल व्रत समझाया है।
जो विघ्न कर्म का विघ्न हरें, युग-युग से होता आया है॥

उज्जैन नगर में सागरदत्त, इक सेठ और सेठानी थे।
छप्पन करोड़ मुद्राधर के, सुत सात सुभग अभिमानी थे॥2॥
निर्ग्रंथ साधु के वचन सुने, इक दिन जिनगृह जा सेठानी।
सबको व्रत लेते देख स्वयं, उसने व्रत लेने की ठानी॥
बोली मुनि ! मुझको वह व्रत दो, जो एक वर्ष में आता हो।
उसमें भी रूखा-सूखा ही, कुछ खाने को मिल जाता हो॥3॥
श्री मुनि ने रोट तीज व्रत दे, उसका निश्छल कल्याण किया।
धन मद में बेटे-बहुओं ने, उस व्रत का भी अपमान किया॥
पापोदय से सेठानी ने, निन्दा सुन व्रत को छोड़ दिया।
तत्क्षण लक्ष्मी धन सुकृत ने, उस घर से नाता तोड़ लिया॥4॥
हीरे पत्थर सोना मिट्टी, मोती जल बनकर नष्ट हुए।
जलयान सभी हो गये लुप्त, नौकर-चाकर भी रुष्ट हुए॥
उज्जैन छोड़ वह सागरदत्त, निज पत्नी पुत्रों संग चला।
पहले उसको हस्तिनपुर में, निज पुत्री का ससुराल मिला॥5॥
बेटी को अपनी व्यथा सुना, बोले हम कुछ दिन यहीं रहें।
बेटी बोली इस दुर्दिन में, सब यहाँ नहीं कहीं और रहें॥
फिर भी प्रीति के वश उसने, भोजन संग हीरे भेज दिये।
पर भोजन कृमिकुल युक्त हुआ, हीरे भी पत्थर रूप हुए॥6॥
फिर वे बसंतपुर पहुँच गये, था सेठानी का भ्रात जहाँ।
लज्जावश वे ना गये वहाँ, जबकि था प्रीतिभोज वहाँ॥
व्रत निन्दा का फल भोग रहे, वे सोलह के सोलह प्राणी।
बह रहा मांड जिस नाली से, मटकी ले पहुँची सेठानी॥7॥
धनहीन ननद को लख भाभी, पत्थर खिसकाये नाली में।
उस गर्म मांड से सेठानी, जल गयी हाय कंगाली में॥
वे नगर अयोध्या पहुँच गये, जहाँ सागरदत्त का मित्र मिला।
चित्राम मोर माला निगले, इनको चोरी का दाग मिला॥8॥

उस वृथारोप से बचने को, वे चम्पापुर नगरी आये।
वहाँ सेठ समुद्रदत्त के घर, सब दास वृत्ति को अपनायें।।
झाड़ू चौका बर्तन कपड़े, सेठानी बहुओं संग करे।
सागरदत्त सातों पुत्र सहित, धंधे में आठों याम मरे।।9।।

इक दिन घर की सेठानी ने, सागरदत्ता को समझाया।
घर को अच्छे से साफ करो, कल रोट तीज शुभ व्रत आया।।
भादों शुक्ला तृतीया के दिन, शुभ रोट तीज व्रत होता है।
इसमें त्रयकालिक चौबीसी, इनका शुभ पूजन होता है।।10।।

निज गृह में अक्षय रोट बना, जो प्रभु को अर्पण करता है।
वो दरिद्रता दुःख को विनशा, निज अक्षय वैभव करता है।।
उस व्रत की महिमा सुन सबने, पूर्वोक्त पाप का स्मरण किया।
निंदा गर्हा आलोचन कर, अपने सब दुःख का हरण किया।।11।।

अगले दिन छोटी बहु ने जा, जिनगृह में प्रभु का भजन किया।
भक्ति से सुन्दर रोट चढ़ा, श्रद्धा से प्रभु को नमन किया।।
उसकी श्रद्धा के अतिशय से, वह रोट स्वर्ण में बदल गया।
उसकी चर्चा घर-घर फैली, उन सबका जीवन बदल गया।।12।।

फिर से व्यापार बढ़ा उनका, जलयान मिले सम्मान मिला।
जिनधर्म और व्रत के द्वारा, उनको सम्यक् उत्थान मिला।।
यह रोट तीज व्रत अपनाकर, हम सब अपना उद्धार करें।
त्रय गुप्ति सकल संयम द्वारा, 'गुप्तिनंदी' भवपार करें।।13।।

ॐ ह्रीं अर्हं श्री भूत-वर्तमान-भविष्यत्काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- रोट तीज व्रत का मिले, यही हमें वरदान।
त्रय गुप्ति से प्राप्त हो, मुक्ति राज अभियान।।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पांजलिं क्षिपेत्

श्री त्रिकाल चौबीसी आरती

(तर्ज - मेरा मन डोले.....)

दीपक लाओ, आरती गाओ, जय तीन चौबीसी विधान की ।
हम करें सभी मिल आरतियाँ॥
हम करें.....

1. भूत, भविष्यत, वर्तमान की, चौबीसी को ध्याऊँ।
रत्नजड़ित दीपों की थाली, लेकर आरती गाऊँ॥2॥
जय प्रभुवर की, जय जिनवर की, ले स्वर्ण दीप का थाल ये...
हम करें...

2. चौबीसों प्रभुवर का कीर्त्तन, यशकीर्ति दिलवाता।
झूम-2 कर करो आरती, पुण्य कमल खिल जाता-2॥
झूमो, नाचो, आरती गाओ, जय त्रय कालिक जिनराज की।
हम करें...

3. जिसने इस व्रत को अपनाया, वो थी नगर सेठानी।
परिजन ने की व्रत की निंदा, दु:ख पाये सब प्राणी-2॥
व्रत अपनाया, वैभव पाया, इस व्रत की महिमा विशाल है...
हम करें...

4. दु:ख द्रारिद्र नशाने वाला, व्रत अपनाओ प्राणी।
स्वर्ग मोक्ष सुख इससे मिलता, कहती ये जिनवाणी-2॥
आस्थापूर्वक, पूजन करलो, कहे ''गुप्तिनंदी'' गुरुराज ये....
हम करें सभी मिल आरतियाँ,
दीपक लाओ, आरती गाओ...॥

श्री त्रिकाल चौबीसी आरती

(तर्ज – झूम-झूम झन-झन नन बाजे.....)

त्रय कालिक जिनराज की हम करें आरतियाँ।
करें आरतियाँ बाबा करें आरतियाँ.....

स्वर्ण रजत के दीपक लाये, नाना मंगल वाद्य बजाएं।
झूम-झूम हर्षाएँ..... हम करें आरतियाँ.....

भूत अनागत वर्तमान की, तीन चौबीसी भरत क्षेत्र की।
सबकी भक्ति रचाएँ..... हम करें आरतियाँ.....

दु:ख संकट को हरने वाला, धन वैभव को देने वाला।
यह विधान करवाएँ..... हम करें आरतियाँ.....

सेठानी ने व्रत को धारा, दरिद्रता ने किया किनारा।
सुख-संपत्ति सब पायें.....हम करें आरतियाँ.....

गुप्तिनंदी यह भाव बनाए, सबको मोक्ष ''सुयश'' मिल जाए।
शाश्वत शिव सुख पायें..... हम करें आरतियाँ.....

***

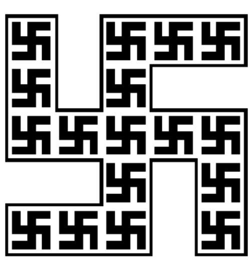

श्री विधान प्रशस्ति

शंभु छंद

जय–जय अरिहंत सिद्ध सूरि, पाठक मुनियों की जय–जय हो।
जय त्रयकालिक चौबिस–चौबिस, तीर्थंकर जिनवर की जय हो॥
जय–जय उनके सब गणधर की, शासनगत मुनियों की जय हो।
अर्हत् भाषित गणधर गुंथित, श्री द्वादशांग श्रुत की जय हो॥1॥

आगम ज्ञाता, आगम लेखक, श्रुत व्याख्याता गुरूओं की जय।
श्री जैन दिगम्बर मत पोषक, निर्ग्रन्थ सर्व सूरी की जय॥
धरसेन भूतबलि पुष्पदंत, बहु सारस्वत आचार्य हुए।
इस अक्षय क्रम में तपोनिधि, श्री आदि सिन्धु आचार्य हुए॥2॥

उनकी शरणा में महाश्रमण, महावीर कीर्ति गुरुवर आये।
वे अष्टादश भाषा ज्ञाता, विद्वान् बालयति कहलाये॥
उपलब्ध सर्व जैनागम विद, औषध विद्या के ज्ञाता थे।
बहु यंत्र मंत्र और तंत्र शास्त्र, ज्ञाता गुरु मुनि निर्माता थे॥3॥

उनके शिष्यों में कुंथुसिंधु, आचार्य प्रभावक कहलाये।
वे गुरु मम मुनि दीक्षा दाता, सूरिपद दाता कहलाये॥
मम शिक्षा गुरु श्री कनकनंदी, आचार्य श्रेष्ठ को नित ध्याये।
द्वय गुरुओं का अवलंबन ले, हम इस विधान को रच पाये॥4॥

गणिनी राजश्री अम्ब रचित, श्री गणधर वलय महापूजा।
अतिशीघ्र जगत विख्यात हुआ, उसके सम ग्रन्थ नहीं दूजा॥
उसके सम्पादन का सुयोग, मुझ अल्प बुद्धि मुनि ने पाया।
निज संघ सृजन कुछ ग्रंथ सृजन, उस शुभ फल से ही कर पाया॥5॥

श्री रत्नत्रय विधान वृहत्, श्री नवग्रह शांति विधान रचा।
श्री मज्जिन पंचकल्याणक शुभ, लघु गणधरवलय विधान रचा।।
गणिनी राजश्री माता ने, इसका संपादन सरल किया।
रस छंद अलंकारों द्वारा, हर कृति को सुन्दर सरल किया।। 6।।

यह रोट तीज व्रत शाश्वत है, यह पूजा भी त्रयकाल रहे।
पूजक का वैभव शाश्वत हो, मुक्ति लक्ष्मी तत्काल वरें।।
निज कर्म नाश हो मोक्ष वास, बोधि समाधि का लाभ मिले।
मुझ 'गुप्तिनंदी' की आस यही, जिन भक्ति में यह कलम चले।।7।।

इति अलम्

प.पू. कविहृदय प्रज्ञायोगी आचार्यश्री गुप्तिनंदी गुरुदेव की आराधना

रचनाकार : गणिनी आर्यिका क्षमाश्री माताजी

स्थापना (शंभु छंद)

हे पंच महाव्रत के धारी, हे बालयोगी मुनि को वन्दन।
हम हृदयकमल में बुला रहे, करने भावों से स्थापन।।
हो सौम्य शांत प्रतिभाधारी, गुण गाते हैं सब नर-नारी।
सन्निकट हमारे सदा रहें, बन जायें तुम सम अविकारी।।1।।

ॐ ह्रीं परम पूज्य आचार्य श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननम्। अत्र तिष्ठ-तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।।

निर्मल मन के धारी गुरु को निर्मल जल चरण चढ़ाते हैं।
भावों की शुचिता पाने को गुणगान तिहारा गाते हैं।।
गुरुवर की आरती पूजन से मन में शांति हो जाती है।
गुरु गुप्तिनंदी की शरणा पा जीवन में क्रांति आती है।।

ॐ ह्रीं परम पूज्य आचार्यश्री गुप्तिनंदी गुरुदेव चरणेभ्यो जन्मजरामृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा॥1॥

शीतल स्वभाव के धारी मुनि हम चंदन से अर्चा करते।
संसार ताप से बचने को गुरु शरण धर्म चर्चा करते॥
गुरुवर की आरती पूजन से मन में शांति हो जाती है।
गुरु गुप्तिनंदी की शरणा पा जीवन में क्रांति आती है॥

ॐ ह्रीं.....संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा॥2॥

रत्नत्रय धारी हैं गुरुवर अक्षय पद को पाने वाले।
शुभ अक्षत चरण चढ़ाते हैं बनकर तेरे हम मतवाले॥ गुरुवर........॥

ॐ ह्रीं.....अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा॥3॥

पुष्पों से कोमल हे गुरुवर ! दुर्लभ संयम अपनाया है।
इस काम अरि से बचने को चरणों में पुष्प चढ़ाया है॥ गुरुवर........॥

ॐ ह्रीं.....कामबाणविनाशनाय पुष्पाणि निर्वपामीति स्वाहा॥4॥

वश करने क्षुधावेदनी को कर पात्र एक भुक्ती करते।
ऐसे गुरुवर के चरणों में नैवेद्य चढ़ा दु:ख से बचते॥ गुरुवर........॥

ॐ ह्रीं..... क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा॥5॥

अज्ञान अँधेरे में भटके प्राणी को ज्ञान बताया है।
हम दीप चढ़ाते चरणों में हमने ज्ञानी गुरु पाया है॥ गुरुवर........॥

ॐ ह्रीं.....मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा॥6॥

आठों कर्मों से लड़ने को असिव्रत तुमने है धार लिया।
यह धूप धूपायन में खेकर हमने तेरा यशगान किया॥ गुरुवर........॥

ॐ ह्रीं..... अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा॥7॥

अनुपम फल को पाने वाले शिवपुर के राही हे गुरुवर।
हम सुफल चढ़ाकर पूज रहे पाने मुक्ति पथ की ये डगर॥
गुरुवर की आरती पूजन से मन में शांति हो जाती है।
गुरु गुप्तिनंदी की शरणा पा जीवन में क्रांति आती है॥

ॐ ह्रीं.....महामोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा॥8॥

गुप्तिनंदी गुप्तिधारी हो मोक्षपुरी के अधिकारी।
हम अष्ट द्रव्य का अर्घ चढ़ा बन जायें संयम के धारी॥ गुरुवर........॥

ॐ ह्रीं.....अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥9॥

जयमाला

दोहा– **गुप्तिनंदी गुरुदेव जी, करते निज कल्याण।**
जयमाला पढ़कर करें, गुरुवर का गुणगान॥

(तर्ज : झीनी–झीनी उड़ी रे गुलाल चालो रे मंदरिया में...)

माँ त्रिवेणी के भाग्य जगे थे, कोमलचन्द घर वाद्य बजे थे।
खुशियाँ अपरम्पार॥ चालो रे...॥1॥

एक अगस्त उन्नीस सौ बहत्तर, गुरुवर तुमने जन्म लिया था।
हो गया मंगलकार॥ चालो रे...॥2॥

नगर भोपाल से चमका सितारा, छोड़ दिया गुरु ने घर बारा।
मच गया हाहाकार॥ चालो रे...॥3॥

वर्ष अठारह की लघु वय में, मुनिव्रत धार लिया गुरुवर ने।
हो गई जय–जयकार॥ चालो रे...॥4॥

सूरी पद गोम्मट गिरि पाया, भक्तों ने जयकार लगाया।
बने स्व पर सुखकार॥ चालो रे...॥5॥

छत्तिस गुण को पालन करते, निर्भय हो परिषह भी सहते।
करते पाप निवार ॥ चालो रे... ॥6॥

विविध कलायें इनको आतीं, जो जन-जन के मन को लुभातीं।
हो जग के मनहार ॥ चालो रे... ॥7॥

काव्य रचा जिन भक्ति बनाते, प्रवचन से सबको हर्षाते।
करते जग उद्धार॥ चालो रे... ॥8॥

नहीं किसी से मोहित होते, किन्तु सबका मन हर लेते।
हो जग मन आधार ॥ चालो रे... ॥9॥

हे गुरुवर ! हम तव गुण गायें, भव दु:खों से हैं घबराये।
कर दो बेड़ा पार ॥ चालो रे... ॥10॥

शरण आपकी हम नित पायें, अपना जीवन धन्य बनावें।
पावें मुक्ति द्वार॥ चालो रे... ॥11॥

ॐ ह्रीं परम पूज्य आचार्यश्री गुप्तिनंदी गुरुदेव चरणेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **अल्प बुद्धि मैं हूँ, गुरु 'क्षमा' करें गुरुराज।**
शक्ति हीन हूँ हे गुरु !, दे दो शरणा आज॥

(इत्याशीर्वाद:)

संघस्थ त्यागियों का अर्घ

जल चंदन आदि लाऊँ, मनहर शुभ अर्घ चढ़ाऊँ।
मैं पद अनर्घ को पाऊँ, सब त्यागियों को ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री परम पूज्य संघस्थ... चरणेभ्यो: अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

***

अर्घावली

श्री शांतिनाथ भगवान (शंभु छंद)

तुम मोक्ष महाप्रद सुखकारी हो शांतिनाथ शांतिकारी।
आठों द्रव्यों को साथ चढ़ा बन जाये हम भी अविकारी॥
तीर्थंकर चक्री कामदेव हो तीन पदों के तुम धारी।
प्रभुवर की पूजा करने से मिट जाती भव की बीमारी॥

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री चौबीस तीर्थंकर (अडिल्ल छंद)

जल फल आदि अर्घ बनाये भाव से।
पद अनर्घ हित भक्ति रचाये चाव से॥
जिन शासन का चक्र प्रवर्त्तन कर रहे।
चौबीसों जिनवर भव संकट हर रहे॥

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरपर्यंत चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनवाणी माता (चामर छंद)

नीर गंध वस्त्र आदि अर्घ भाव से लिया।
आपका विधान मात भक्ति भाव से किया॥
दिव्य देशना महान है जिनेश आपकी।
मात अर्चना हरे प्रवंचना विभाव की॥

ॐ ह्रीं श्री जिनमुखोद्भवसरस्वतीवाग्वादिनीभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री गणाधिपति गणधर भगवान का अर्घ

कर्म अष्ट से लड़ने हेतु वेष दिगम्बर धार लिया।
क्षायिक पद की अभिलाषा से कर्म अरि पर वार किया॥
जल फल आदि आठ द्रव्य से करता प्रभु का अभिनंदन।
मुनिगण के स्वामी हैं गणधर उनका मैं करता अर्चन॥

ॐ ह्रीं श्री सर्वगणधर परमेष्ठिभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री तीन कम नवकोटि मुनिराज (शंभु छंद)

जल, चंदन, अक्षत, दीप, धूप, नैवेद्य, हरित फल लाया हूँ।
अन्तर में भक्तिभाव लिये ऋषिराज शरण में आया हूँ।।
नवकोटि न्यून त्रय मुनियों को मैं वंदन बारम्बार करूँ।
बन जाऊँ मुनिमन सम निर्मल यह शुद्ध भावना हृदय धरूँ।।

ॐ ह्रीं श्री अढ़ाई द्वीपस्थ न्यून त्रय नवकोटि श्रमणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ग. गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी (शेर छंद)

आचार्य कुंथु सिंधु है वात्सल्य दिवाकर।
हम धन्य-धन्य आज उनको अर्घ चढ़ाकर।।
जिनधर्म का डंका बजाना जिनका है धरम।
भक्ति से भक्त बोलो वंदे कुंथुसागरम्।।

ॐ ह्रीं गणाधिपति गणधराचार्य श्री कुन्थुसागरजी गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी (जोगीरासा छंद)

कनकनंदी की ज्ञान रश्मियाँ ज्ञान किरण फैलाये।
वैज्ञानिक आचार्य हमारे सबको धर्म सिखाये।।
साम्य भाव ही सुख स्वभाव है यही गुरु बतलाये।
कनक रजत की थाल सजाकर गुरु को अर्घ चढ़ाये।।

ॐ ह्रीं वैज्ञानिक धर्माचार्य श्री कनकनंदीजी गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रज्ञायोगी आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी

(तर्ज-मेरे सर पे...)

हे प्रज्ञायोगी गुरुवर दो प्रज्ञा का वरदान।
गुरुवर गुप्तिनंदी को बारम्बार प्रणाम-2
अष्ट द्रव्य से सजी धजी ये सुन्दर थाल निराली है।
गुरुवर तुमको अर्घ चढ़ाकर मिल जाती खुशहाली है।।
हे कुंथु गुरु के नंदन, हे धर्मतीर्थ की शान।
गुरुवर गुप्तिनंदी को बारम्बार प्रणाम-2

ॐ ह्रीं प्रज्ञायोगी आचार्य श्री गुप्तिनंदीजी गुरुदेव चरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय अर्घ

(शेर छंद)

मैं पूजता अरिहंत सिद्ध सूरि को सदा।
उवज्झाय सर्व साधु और शारदा मुदा।।
गणधर गुरु चरण की नित्य अर्चना करूँ।
दश धर्म सोलह भावना की अर्चना करूँ।।1।।

अरहंत भाषितार्थ दया धर्म को भजूँ।
श्री तीन रत्न रूप मोक्ष धर्म को जजूँ।।
त्रैलोक्य के कृत्रिम–अकृत्रिम चैत्य को ध्याऊँ।
चैत्यालयों का ध्यान लगा अर्घ चढ़ाऊँ।।2।।

सब सिद्ध क्षेत्र तीर्थ क्षेत्र को भजूँ सदा।
औ तीन लोक के समस्त तीर्थ सर्वदा।।
चौबीस जिनवरों व बीस नाथ को ध्याऊँ।
जल आदि अष्ट द्रव्य ले पूर्णार्घ चढ़ाऊँ।।3।।

दोहा : जल आदिक वसु द्रव्य की, लेकर आये थाल।
महाअर्घ अर्पण करें, प्रभु को नमें त्रिकाल।।

ॐ ह्रीं द्रव्य सहित भावपूजा भाववंदना त्रिकाल पूजा त्रिकाल वंदना करे करावै भावना भावै श्री अरहंतसिद्ध आचार्य उपाध्यायसर्वसाधु पंच परमेष्ठिभ्यो नमः। प्रथमानुयोग करणानुयोग चरणानुयोग द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः। उत्तमक्षमादि दशलाक्षणिकधर्मेभ्यो नमः। दर्शनविशुद्धयादि षोडशकारणेभ्यो नमः। सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्रेभ्यो नमः। विदेह क्षेत्रस्थ विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः। जल, थल, आकाश, गुफा, पहाड़, सरोवर, नगर–नगरी, ऊर्ध्वलोक, मध्यलोक, अधोलोक स्थित कृत्रिम–अकृत्रिम जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः। पाँच भरत पाँच ऐरावत संबंधी तीस चौबीसी के सात सौ बीस जिनराजेभ्यो नमः। नंदीश्वर द्वीप संबंधी बावन जिनचैत्यालयेभ्यो नमः। पंचमेरू संबंधी अस्सी

जिनचैत्यालयेभ्यो नमः। सम्मेदशिखर, कैलाशगिरी, चंपापुर, पावापुर, गिरनार, सोनागिर, मथुरा, गजपंथा, मांगीतुंगी, तपोभूमि आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः। जैनबद्री, मूढ़बद्री, देवगढ़, चंदेरी, पपौरा, हस्तिनापुर, अयोध्या, कुंथुगिरी, पुष्पगिरी, अंजनगिरी, धर्मतीर्थ, वरूर,राजगृही, तारंगा, चमत्कार, महावीरजी, पदमपुरा, तिजारा, अहिच्क्षेत्र, कचनेर, जटवाड़ा, पैठण, गोम्मटेश्वर, चंवलेश्वर, बिजौलिया, चांदखेड़ी, पाटन, कुण्डलपुर, अणिन्दा वृषभदेव णमोकार ऋषि तीर्थ आदि अतिशय क्षेत्रेभ्यो नमः। श्री चारण ऋद्धिधारी सप्त परमर्षिभ्यो नमः। भूत–भविष्यत–वर्तमान काल संबंधी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः।

ॐ ह्रीं श्रीमंतं भगवंतं कृपावंतं श्री वृषभादि महावीरपर्यंतं चतुर्विंशति तीर्थंकर परमदेवं आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरत क्षेत्रे आर्यखण्डे भारत देशे............... प्रान्ते–नगरे..........मासानांमासे......... मासे.........पक्षे.........तिथौ..........वासरे मुनि आर्यिकाणां श्रावक श्राविकाणां, क्षुल्लक, क्षुल्लिकानां, सकल कर्मक्षयार्थं (जलधारा) जलादि महार्घं निर्वपामीति स्वाहा।

(27 श्वासोच्छ्वास में 9 बार णमोकार मंत्र पढ़ें।)

शांतिपाठ (हिन्दी)

चौपाई

(शांतिपाठ बोलते समय पुष्पाञ्जलि क्षेपण करते रहें)

शशि सम निर्मल जिन मुखधारी, शील सहस्र गुणों के धारी।
लक्षण वसु शत त्रयपदधारी, कमल नयन शांति सुखकारी।।1।।

(नोट–यहाँ शांतिधारा करें।)

शांतिनाथ पंचम चक्रीश्वर, पूजें तुमको इन्द्र मुनीश्वर।
शांति करो हे शांति ! जिनेश्वर, जगत् शांतिहित नमते गणधर।।2।।
आठों प्रातिहार्य मनहारी, ये जिन वैभव हैं सुखकारी।
तरु अशोक पुष्पों की वर्षा, दिव्य ध्वनि सिंहासन रवि सा।।3।।
छत्र चँवर भामंडल चम–चम, देव–दुंदुभि बजती दुम–दुम।
शांति करो त्रय जग में स्वामी, शीश झुकाता तुमको स्वामी।।4।।

आप अनंत चतुष्टय धारी, मंगल द्रव्य आठ अघहारी।
सर्व विघ्न प्रभु आप नशाओं, हे शांति प्रभु ! शांति दिलाओ॥5॥
पूजक राजा शांति पायें, मुनि तपस्वी शांति पायें।
राष्ट्र नगर में शांति छाये, शांति जगत् में हे जिन ! आये॥6॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् (9 बार णमोकार मंत्र का जाप करें।)

(दोनों हाथ में चावल या पुष्प लेकर करबद्ध हो विसर्जन पाठ पढ़े मंत्र के साथ पुष्पाञ्जलि करें)

विसर्जन पाठ

(दोहा)

जाने अनजाने हुई, प्रभु पूजा में चूक।
मैं अज्ञान अबोध हूँ, क्षमा करो सब चूक॥1॥
जानूँ नहीं आह्वान मैं, पूजा से अनजान।
ज्ञान विसर्जन का नहीं, क्षमा करो भगवान॥2॥
अक्षर पद और मात्रा, व्यंजनादि सब शब्द।
कम ज्यादा कुछ कह दिया, छूट गये हों शब्द॥3॥
मिथ्या हो सब दोष मम, शरण रखो भगवान।
तव पूजा करके प्रभु, बन जाऊँ भगवान॥4॥

ॐ आं क्रौं ह्रीं अस्मिन् नित्य पूजाभिषेक विधाने आगच्छत सर्वे देवाः स्वस्थाने गच्छतः-3जः-3स्वाहा।

इत्याशीर्वादः दिव्य पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

(9 बार णमोकार का जाप करें।)

(नोट-दीपक लेकर श्रीजी की मंगल आरती करें।)

(यह दोहा बोलते हुए आशिका ग्रहण करें)

दोहा : गंध पुष्प प्रभु रज यही, इसको शीश झुकाय।
पुष्प लिये आह्वान के, अपने शीश लगाय॥

(तुभ्यम् नमस्त्रि बोलते हुये भगवान को गुरु को नमस्कार करें।)

***

चौबीस तीर्थंकर चालीसा

रचनाकार : आर्यिका आस्थाश्री माताजी

दोहा- नमन करूँ अर्हंत को, सिद्ध प्रभु सुख धाम।
पाठक यति मुनिराज का, करूँ जाप अविराम॥
सरस्वती से अर्ज ये, कर दो भव से पार।
चौबीसों भगवान का, चालीसा सुखकार॥

(चौपाई)

जय-जय हो तीर्थंकर स्वामी, चौबीसों जिन अन्तर्यामी।
पंच कल्याणक प्रभु का प्यारा, पाया प्रभु ने शिवपुर द्वारा॥1॥
वीतराग सर्वज्ञ बने थे, तीन लोक के ईश बने थे।
चालीसा प्रभुवर का गायें, नवग्रह की बाधा नश जाये॥2॥
माता सोलह स्वप्ने देखे, जागे नाम प्रभु का लेके।
पिता स्वप्न का फल बतलाते, राजमहल में हर्ष मनाते॥3॥
प्रभु का जन्म महोत्सव न्यारा, अन्तिम जन्म प्रभु ने धारा।
देव समूह प्रभु संग खेले, देव बने प्रभुवर के चेले॥4॥
जब मन में वैराग्य समाया, सारे वैभव को ठुकराया।
द्वादश अनुप्रेक्षायें भायें, तत्क्षण लौकान्तिक सुर आये॥5॥
जिनमुद्रा भी देती शिक्षा, हे प्रभु ! हम भी पाये दीक्षा।
मोक्षमार्ग के ये अभिनेता, कर्मविजेता जग के त्रेता॥6॥
जब भी नवग्रह बाधा आये, चौबीसों प्रभुवर को ध्यायें।
रविग्रह जब प्रतिकूल बने तो, पद्म प्रभु का नाम जपे वो॥7॥
पद्मप्रभु ही भाग्य जगावे, दुःख भी मेरा सुख बन जावे।
चन्द्र अरिष्ट निवारण हेतू, चन्द्रप्रभु हैं सुख के सेतू॥8॥
चन्द्र प्रभु शीतलता देते, भव-भव के सब दुःख हर लेते।
आधि-व्याधि विपदायें भारी, प्रभु की पूजा ही सुखकारी॥9॥
मंगल जब पीड़ा पहुँचावे, वासुपूज्य ही शांति दिलावे।
बुध ग्रह बुद्धी को हर लेवे, चित् में चंचलता भर देवे॥10॥

अष्ट जिनेश्वर कष्ट मिटावे, बुधग्रह को अनुकूल बनावे।
विमल अनंत धर्म सुखदाता, कुंथु अरह नमि भाग्य विधाता॥11॥
महावीर शांति को ध्यायें, बुधग्रह से छुटकारा पायें।
जो जिनवर की भक्ति रचाते, उनके अष्ट कर्म नश जाते॥12॥
गुरु ग्रह गुरु से दूर करावे, तब प्रभुवर की शरणा आवे।
आदि अजित संभव जिनस्वामी, अभिनंदन सुमति के दानी॥13॥
श्री सुपार्श्व शीतलता दाता, श्रेयनाथ प्रभु कष्ट मिटाता।
अष्ट जिनेश्वर मंगलकारी, नाम आपका संकटहारी॥14॥
शुक्र दोष बहु नाच नचाता, धर्म कार्य से दूर भगाता।
पुष्पदंत को पुष्प चढ़ायें, शुक्र दोष को दूर भगायें॥15॥
शनिग्रह की लीला है न्यारी, नाच नचावे वो अति भारी।
सुख वैभव यश आदि दिलावे, कभी दीन दारिद्र बनावे॥16॥
मुनिसुव्रत की शरणा आओ, मन में श्रद्धा दीप जलाओ।
राहू की बाधा जब आवे, बंधु बांधव प्रीत भुलावें॥17॥
नेमीनाथ का कीर्त्तन गाओ, उनके चरण कमल नित ध्याओ।
केतूग्रह दुर्योग बनाता, जीवन मृत्यु सम बन जाता॥18॥
चिंतामणि चिन्तित फल देते, पार्श्वनाथ संकट हर लेते।
मल्लिनाथ को शीश झुकायें, गुप्ति त्रय हित भक्ति रचायें॥19॥
चौबीस तीर्थंकर जग त्राता, विघ्ननिवारक शिवसुख दाता।
'आस्था' को प्रभु दर्श दिखाओ, भवसागर से पार लगाओ॥20॥

दोहा- चालीसा चालीस दिन, पढ़ो सुनो मन लाय।
धूप अनल में खेयकर, सम्यक् दीप जलाय॥
चरण कमल जिनराज के, पाऊँ बारम्बार।
'आस्था' को बोधि मिले, नमन करूँ शतबार॥

जाप्य-ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमः। (9, 27, 108 बार जाप करें।)

श्री सम्मेदशिखर चालीसा

रचनाकार : आर्यिका आस्थाश्री माताजी

दोहा– चौबीसों जिनराज को, वंदन बारम्बार।
परमेष्ठी पाँचों विभु, सबके तारणहार।।
जिनवाणी गणधर प्रभु, कर दो ज्ञान प्रकाश।
सम्मेदाचल को नमूँ, पाऊँ मोक्ष निवास।।

(चौपाई)

गिरि सम्मेद शिखर कहलाये, चालीसा हम उसका गायें।
जो सम्मेद शिखर जी आये, वो ही भव्यातम कहलाये।।1।।
एक बार दर्शन जो पाये, दुर्गति नाश सुगति पा जाये।
तीर्थराज की महिमा जानो, इसका कण-कण पावन मानो।।2।।
मधुवन मन को हरनेवाला, सबका मंगल करने वाला।
गिरि सम्मेद लगे मनहारी, जिन मंदिर हैं मंगलकारी।।3।।
ऊँचे भव्य जिनालय प्यारे, वो हम सबका भाग्य सँवारे।
बीसों प्रभुवर मोक्ष गये हैं, मुनि करोड़ों सिद्ध हुये हैं।।4।।
पर्वत की रज शीश लगाये, सभी टोंक के दर्शन पाये।
प्रभु का नाम सुमरते जाये, कुंड चौपड़ा मन हर्षाये।।5।।
दौड़-दौड़कर ऊपर जाते, पार्श्व प्रभु के दर्शन पाते।
प्रथम टोंक गणधर की आये, करें आरती अर्घ चढ़ायें।।6।।
गणधर प्रभु से मिलती शक्ति, सब जिनवर की करते भक्ति।
कुंथुनाथ जिनवर को ध्यायें, कूट ज्ञानधर ज्ञान बढ़ाये।।7।।
कूट मित्रधर नमिप्रभु का, नीलकमल है चिन्ह उन्हीं का।
सब सिद्धों को अर्घ चढ़ायें, उठें बैठकर शीश झुकायें।।8।।
अरहनाथ जिनवर हितकारी, नाटक कूट वरी शिवनारी।
मल्लिनाथ ने ध्यान लगाया, संवल कूट परम सुख पाया।।9।।

श्रेयनाथ श्रेयस के दाता, संकलकूट श्रेष्ठ सुख दाता।
पुष्पदंत को पुष्प चढ़ायें, सुप्रभकूट हृदय को भायें ॥10॥
पद्मप्रभु को पद्म चढ़ायें, मोहनकूट मनोज्ञ कहायें।
मुनिसुव्रत प्रभु कर्म नशायें, नीरज कूट प्रसिद्ध कहायें ॥11॥
चंद्र चिह्नधर चंदा स्वामी, ललित कूट से मुक्ति गामी।
ऋषभदेव अष्टापद जायें, नित्य निरंजन पदवी पायें ॥12॥
शीतलप्रभु शीतलता देते, विद्युतवर से शिव वर लेते।
सब टोंकों पे फेरि लगायें, मंत्र प्रभु का जपते जायें ॥13॥
कूट स्वयंभू है मनहारी, प्रभु अनंत वरते शिवनारी।
धवलकूट पे ध्वजा चढ़ाये, संभव प्रभु का कूट कहाये ॥14॥
वासुपूज्य चंपापुर स्वामी, पाँच चरण पंचम गति दानी।
अभिनंदन आनंद प्रदाता, आनंद कूट महानंद दाता ॥15॥
धर्मनाथ का ध्यान लगाओ, सुदत्तकूट पे दीप जलाओ।
सुमतिनाथ वसुकर्म नशायें, अविचल कूट सिद्ध पद पायें ॥16॥
शांतिनाथ है शांति प्रचारी, कूट कुंदप्रभ जग उपकारी।
बालयति प्रभु वीर कहाये, पावापुर से मुक्ति उपाये ॥17॥
कूट प्रभास प्रभा फैलाये, श्री सुपार्श्व को लड्डू चढ़ायें।
कूट सुवीर विमल कहलाया, देवों ने जयकार लगाया ॥18॥
प्रथम सिद्धवर कूट कहाये, अजित सिद्ध पदवी को पायें।
तज राजुल को नेमी जायें, गिरनारी से मुक्ति पायें ॥19॥
पार्श्व प्रभु उपसर्ग विजेता, गिरि सम्मेदशिखर के नेता।
छत्र चढ़ा हम न्हवन करेंगे, आरती पूजन भजन करेंगे ॥20॥

दोहा- दीप धूप लेकर चलें, अष्ट द्रव्य के साथ।
मोदक श्रीफल ले चलें, और ध्वजा ले हाथ॥
त्रय गुप्ति को साधकर, मुक्ति शिखर मिल जाय।
चालीसा के पाठ में, 'आस्था' भाव लगाय॥

जाप्य-ॐ ह्रीं श्री सम्मेदशिखर सिद्धक्षेत्राय नमः। (9, 27, 108 बार जाप करें।)

श्री धर्मतीर्थ प्रकाशन

पोस्ट कचनेर गट नं. 11-12, जिला औरंगाबाद (महाराष्ट्र) द्वारा

आर्ष मार्ष संरक्षक, कवि हृदय, प्रज्ञायोगी, दिगम्बर जैनाचार्य

श्री गुप्तिनंदी गुरुदेव ससंघ का प्रकाशित साहित्य

1. श्री रत्नत्रय आराधना
2. श्री लघु रत्नत्रय आराधना
3. श्री वृहद् रत्नत्रय विधान
4. श्री लघु रत्नत्रय विधान
5. श्री रत्नत्रय भक्ति सरिता
6. श्री रत्नत्रय संस्कार प्रवेशिका (भाग 1)
7. श्री रत्नत्रय संस्कार प्रवेशिका (भाग 2)
8. श्री वृहद गणधर वलय विधान
9. लघु गणधर वलय विधान
10. श्री वृहद नवग्रह शान्ति विधान
11. श्री सूर्यग्रह शान्ति विधान (श्री पद्मप्रभु आराधना)
12. श्री चन्द्रग्रह शान्ति विधान (श्री चन्द्रप्रभु आराधना)
13. श्री मंगलग्रह शान्ति विधान (श्री वासुपूज्य आराधना)
14. श्री बुधग्रह शान्ति विधान (श्री शांतिनाथ आराधना)
15. श्री गुरुग्रह शान्ति विधान (श्री आदिनाथ आराधना)
16. श्री शुक्रग्रह शान्ति विधान (श्री पुष्पदंत आराधना)
17. श्री शनिग्रह शान्ति विधान (श्री मुनिसुव्रतनाथ आराधना)
18. श्री राहूग्रह शान्ति विधान (श्री नेमिनाथ आराधना)
19. श्री केतुग्रह शान्ति विधान (श्री पार्श्वनाथ आराधना)
20. धर्मसूर्य श्री पद्मप्रभ-वासुपूज्य-नेमिनाथ विधान
21. श्री नवग्रह शान्ति चालीसा (बड़ी)
22. श्री नवग्रह शान्ति चालीसा (छोटी)
23. श्री पंचकल्याणक विधान
24. श्री त्रिकाल चौबीसी (लक्ष्मी प्राप्ति) रोट तीज विधान
25. श्री तीस चौबीसी (महालक्ष्मी प्राप्ति) विधान
26. श्री सर्व तीर्थंकर विधान
27. श्री विजय पताका विधान
28. श्री सम्मेद शिखर विधान
29. श्री पंच परमेष्ठी (सर्व सिद्धि) विधान
30. श्री विद्या प्राप्ति विधान
31. श्री श्रुत स्कन्ध विधान
32. श्री तत्त्वार्थ सूत्र विधान
33. श्री भक्तामर विधान
34. श्री कल्याण मंदिर विधान
35. श्री एकीभाव विधान
36. श्री विषापहार विधान
37. श्री णमोकार विधान
38. श्री जिन सहस्रनाम विधान
39. श्री चौबीस तीर्थंकर, लक्ष्मी प्राप्ति बाहुबली-धर्मतीर्थ एवं आचार्य गुप्तिनंदी विधान

40. श्री चन्द्रप्रभु विधान
41. श्री शान्तिनाथ विधान
42. श्री सर्व दोष प्रायश्चित्त विधान
43. श्री रविव्रत विधान
44. श्री पंचमेरु-दशलक्षण-सोलहकारण विधान
45. श्री नंदीश्वर विधान
46. श्री चन्दन षष्ठी व्रत विधान
47. आचार्य शांतिसागर विधान
48. आचार्य श्री कुन्थुसागर विधान
49. आचार्य श्री कनकनंदी विधान
50. आचार्य श्री गुप्तिनंदी विधान
51. श्री छयानवे क्षेत्रपाल विधान
52. श्री भैरव पद्मावती विधान
53. श्री धर्मतीर्थ आरती संग्रह
54. सावधान (काव्य संग्रह)
55. महासती अंजना
56. कौड़ियो में राज्य
57. महासती मनोरमा
58. महासती चन्दनबाला
59. विलक्षण ज्ञानी (आचार्य श्री कनकनंदी जी चरित्र कथा)
60. वात्सल्य मूर्ति (गणिनी आर्यिका राजश्री माताजी स्मारिका)
61. धर्मतीर्थ प्रवेशिका (भाग-1)

सी.डी.

1. श्री सम्मेदशिखर सिद्ध क्षेत्र पूजा (सी.डी.)
2. श्री रत्नत्रय आराधना व महाशांति धारा (डी.वी.डी.)
3. श्री नवग्रह शांति चालीसा (सी.डी.)
4. श्री बाहुबली पूजा (सी.डी.)
5. ये नवग्रह शांति विधान है (सी.डी.)
6. गुप्तिनंदी गुणगान (सी.डी.)
7. वात्सल्यमूर्ति माँ राजश्री (डी.वी.डी.)
8. मेरे पारस बाबा (डी.वी.डी,)
9. देहरे के चन्दा बाबा (एम.पी. 3)
10. श्री कुन्थु महिमा (डी.वी.डी.)
11. कनकनंदी गुरुदेव तुम्हारी जय हो (एम.पी.3)
12. गुप्तिनंदी अभिवन्दना (डी.वी.डी.)
13. जयति गुप्तिनंदी डाक्यूमेन्ट्री (डी.वी.डी.) I,II
14. श्री गुप्तिनंदी संघ हिट्स
15. श्री रत्नत्रय जिनार्चना

* * *